राजस्थान का ऐतिहासिक पुरातत्त्व



राजस्थान

का

ऐतिहासिक पुरातत्व

आशुतोष सक्सैना



साहित्यागार, जयपुर

Rajasthan Ka Etehasic Puratatva

by Ashitosh Saxena



प्रकाशक	साहित्यागार एस एम एस हाईवे, जयपुर-3020
संस्करण	1991
मूल्य	पचहत्तर रुपये
O सर्वाधिकार	लेखकाधीन
मुद्रक	अजमेरा प्रिंटिंग वर्क्स, जयपुर

प्राक्कथन

स्नातकोत्तर अध्ययन के दौरान वकल्पिक विषय के रूप मे पुरातत्व का चुनाव और इस सिलसिले मे विभागीय पुरातात्विक परिभ्रमण मे सम्मिलित होकर अनेक उत्खनन और सग्रहालयो मे सचित सामग्री के अवलोकन से पुरातत्व मे मेरी विशिष्ट अभिरुचि उत्पन्न हुई। इतिहास का विद्यार्थी होने के नाते मैंने इतिहास विषयक जो भी ग्रन्थ पटा उनमे पुरातात्विक सामग्री का उपयोग साहित्यिक साक्ष्यो की तुलना मे नगण्य सा लगा। कारण जो भी हो पर मुझे लगा कि यदि मुझे कभी इतिहास पर लिखने का सुयोग मिला तो मैं पुरातात्विक साक्ष्यो का उपयोग अवश्य करूगा। यह सयोग की बात है कि स्नातकोत्तर उपाधि मिलने के तुरत बाद ही मुझे एम फिल करने का अवसर मिला। एम फिल पाठ्यक्रम म सैद्धातिक विषयो के अतिरिक्त एक लघु शोध प्रबन्ध भी लिखना था। जिसके लिए विषय का चुनाव अपने आप मे एक अहम प्रश्न था। अस्तु मैंने अपने अध्यापकों, सहपाठियो एव मित्रो से परामर्श किया। इस दौरान मेरे समक्ष अनेक विषयो पर काम करने की चर्चा हुई लेकिन मैं ऐसे विषय पर शोध प्रबन्ध लिखना चाहता था जिसमे पुरातात्विक साक्ष्यो का भरपूर उपयोग किया जा सके। अन्तत मैंने राजस्थान का आरम्भिक एतिहासिक पुरातत्व विषय का चयन किया।

प्रस्तुत प्रबन्ध क लिए सामग्री का सकलन एक विकट समस्या थी। एक ही वप के भीतर तीन सैद्धान्तिक प्रश्नपत्रो के पाठ्यक्रम का अध्ययन और पुरातत्व विषयक प्रबन्ध की सामग्री का सकलन दुष्कर लगा। स्वय पुरातात्विक स्थलो पर जाकर कुछ सामग्री सकलन कर उसका विश्लेपण करना असभव था। इन परिस्थितियो मे प्रकाशित सामग्री का सकलन,

विश्लेषण और सश्लेषण ही वकल्पिक माग था। सग्रहालयो मे उत्खनन एव सर्वेक्षण से प्राप्त सामग्री का प्रदशन अत्यल्प है जिसे "समय" और "ग्रथ" की समा म मैंने देखन और परखने का प्रयास किया है। इस कोटि के अप्रदर्शित सचित सकलन (Reserved Collection) सग्रहालयो मे सुरक्षित अवश्य हैं पर मुझे जसे अकिचन शोधार्थी के लिये वे 'आदम के वर्जित फल" से भी कहीं अधिक अलभ्य थे, क्योकि समस्त वजनाओ के बाद भी आदम ने उसे चखा था और मैं उसे दृष्टिपात भी नही कर सका हू स्पश तो दूर की बात है। भविष्य मे यदि मुझ काम करने का अवसर मिला तो यथासाध्य सामग्री का सकलन क्षत्र म जाकर स्वय करूगा।

राजस्थान के आरम्भिक ऐतिहासिक पुरातत्व के अनकानेक पहलुओ पर विभिन्न विद्वानो ने गवपणापूव निबन्ध एव लघु पुस्तिकायें लिखी ह विशेषकर राजस्थान शासन क पुरातत्व एव सग्रहालय विभाग के अधिकारियो न जिनमे डा सत्यप्रकाश श्रीवास्तव (भूतपूव निदेशक), सव श्री रत्नच द्र अग्रवाल (वतमान निदेशक), विजयकुमार (पुरावस्तु पजीकरण अधिकारी) तथा श्री वृजमोहनसिंह परमार प्रमुख है। इन सबके बावजूद राजस्थान के आरम्भिक ऐतिहासिक पुरातत्व के समग्र पहलुओ पर एक साथ विचार करने का प्रयास अभी तक नही किया गया था। सीमित साधन समय और अतिसीमित अनुभव क साथ मैंने इस विषय पर कुछ लिखने का प्रयास किया है जो वस्तुत मेरा प्रथम प्रयास भी है। पारिभाषिक शब्दो के अभाव मे हिन्दी म लिखने का काय और भी अधिक कठिन था जिसे मैंने सम्बन्धित लोगो से परामश कर यथा साध्य सुधारने का यत्न किया।

श्री वृजमोहनसिंह परमार (अधीक्षक जोधपुर सग्रहालय) से मैंने अनेक पुरातात्विक स्थलो के विषय म मौखिक जानकारी प्राप्त की जो अभी प्रकाशित नही है। उनके सदपरामश के लिए मैं आभारी हू। श्री विजयकुमार के समय समय पर दिये गये सहयोग एव सहकार के लिए मैं हृदय से आभारी हू। अस्वस्थता के बाद भी डॉ सत्यप्रकाश ने इस प्रबन्ध को सुना और सुझाव दिये जिसके लिए मैं श्रद्धावत हू। इतिहास एव भारतीय सस्कृति विभाग के अध्यक्ष डॉ देवेन्द्र कौशिक ने इस प्रबन्धलेखन म उत्साह-वद्धन के अतिरिक्त इसे प्रस्तुत करने की समयावधि बढा कर जो अनुग्रह किया है उसके लिए केवल कृतज्ञताज्ञापन बहुत कम है।

श्री रामस्वरूप मिश्र के प्रति आभार मैं किन शब्दो मे व्यक्त करू जिन्होने प्रस्तुत प्रबन्ध के विषय चयन से लेकर इसके अंतिम रूप तक निर्देशन, सहयोग तथा अपनत्व दिया। उनकी सहृदयता आगे आने वाले जीवन मे प्रेरणा व सम्बल रहेगी।

अन्त मे मैं उन सभी मित्रो, सहपाठियो तथा शुभचिन्तको जिनसे मुझे सहयोग, प्रेरणा और उत्साह मिला है धन्यवाद अर्पित करता हू।

जयपुर,
गाधी जयन्ती, 1978

अशुतोष सक्सेना

सक्षेपण - सूची

आई ए आर	इडियन आर्कियीलोजी–ए रिव्यू
ऐ इ	ऐशियन्ट इडिया
का इ इ	कार्पस इस्क्रिप्श स इडिकारम
ज ओ ई	जनरल ऑफ ओरियण्टल इस्टीटयूट बड़ौदा
ज न्यू सी ई	जनरल आफ न्यूमिसमेटिक सोसाइटी ऑफ इडिया, वाराणसी
ज एम एस यू ब	जनरल आफ दी एम एस यूनिवर्सिटी बडौदा
ज रा ए सो ग्रे	जनरल आफ दी रायल एशियाटिक सोसाइटी, ग्रेट ब्रिटेन एण्ड आयरलैण्ड
प्रो सिम्पा राज डे बु ने सा ई	प्रोसीडिंग्स आफ दी सिम्पोजियम आन दी राजपुताना डजर्ट, बुलेटिन ऑफ दी नेचुरल साइसेंज इन इडिया
प्रा से ओ सी पी एन वी पी	प्रोसीडिंग्स ऑफ दी सेमीनार ऑन ओकर क्लड पाटरी एण्ड नादर्न ब्लैक पालिश्ड वेयर
रा थ्रू ए	राजस्थान थ्रू दी एजेज
रा हि का	राजस्थान हिस्ट्री काग्रस

विषय - सूची

अध्याय–1

पर्यावरण आद्य संस्कृतियाँ

राजस्थान का विशिष्ट भौगोलिक पर्यावरण अति प्राचीन काल मे ही इस प्रदेश मे मानव के विकास एव उसके क्रियाकलापो मे सक्रिय योगदान देता आया है। राजस्थान भारत के उत्तरी पश्चिमी भाग का एक राज्य है। 23° 3'–30° 12' उत्तरी अक्षाश और 69° 30'–78° 17' पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित 3,42,274 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल[1] वाला राजस्थान प्रान्त समस्त भारत के क्षेत्रफल का दसवा भाग है और मध्यप्रदेश के बाद देश का दूसरा सबसे बडा प्रान्त है।

भौगोलिक दृष्टि से अरावली पर्वतमाला राजस्थान को दो स्पष्ट भागो मे विभाजित करती है। इस विभाजन मे अरावली पर्वतमाला जो कि भारत की एक प्राचीनतम पर्वतमाला होने के साथ साथ खनिज और प्रस्तर सम्पदा की धनी है, एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती रही है। अरावली पर्वत की एक श्रेणी राजस्थान के दक्षिण पश्चिम से उत्तर-पूर्व को जाती है जो राजस्थान को दो भौगोलिक क्षेत्रो मे बाट देती है—उत्तरी पश्चिमी क्षेत्र तथा दक्षिणी पूर्वी क्षेत्र। अरावली पर्वत की यह श्रेणी गुजरात से प्रारम्भ होकर सिरोही के निकट राजस्थान मे प्रवेश करती है। अजमेर तक अरावली पर्वत की अटूट श्रेणी है, उसके बाद वह अलग अलग पहाडियो मे बट जाती है, जो

---

1 सेन्सस आफ इण्डिया, जिल्द 1, खण्ड 2–3 (1961) पृ 84 उक्त आकडे सर्वेयर जनरल, भारत के प्रतिवेदन पर आधारित हैं।

साँभर झील का पार करती हुई खेतडी के निकट सघाना तक पहुँचती है।

उत्तरी पश्चिमी मरुस्थल

राजस्थान का उत्तरी पश्चिमी भाग जो थार मरुस्थल के नाम से विख्यात है, का वतमान स्वरूप तो रेगिस्तान अवश्य है परन्तु यहा पाषाण युग से ऐतिहासिक युग तक निरन्तर विकासशील सभ्यता के दशन होते हैं। इस आधार पर इस क्षेत्र का मरुस्थलीय स्वरूप बहुत कुछ अर्वाचीन ही प्रतीत होता है। इस क्षत्र म आबादी घनी नही है। वर्षा बहुत कम होती है। यहाँ की भूमि उपजाऊ नही है। रेगिस्तानी मिट्टी मुख्यतया राजस्थान के बडे भूभाग पर फली हुई है। इस प्रकार की मिट्टी मुख्यतया जसलमेर, बीकानेर जोधपुर बाडमर, गगानगर, सीकर तथा झुंझनू जिलो म पायी जाती है। यह मिट्टी बहुत ही अनुपजाऊ है। इस मिट्टी म 95 प्रतिशत रेत और 5 प्रतिशत चिकनी मिट्टी होती है। इसम घुलनशील लवणो की मात्रा अधिक है। पानी का तल सतह से करीब 200 फीट नीचे पाया जाता है। इस क्षत्र क निवासी, जो थोडी बहुत वर्षा होती है, उसी पर निभर रहते है। यह क्षत्र बहुधा सूखा व अकाल ग्रस्त रहता है। जलाभाव के दिनो म किसानो को भोजन व चारे की तलाश म अपने पशुओ के साथ दूर दूर के स्थानो का निष्क्रमण करना पडता है। यहाँ सेंवार घास ही पशुओ का एक मात्र भोजन है। इस क्षत्र के निवासी कठिनाई का जीवन यापन करत हुए भी अपना अस्तित्व बनाये हुए है। इस क्षत्र मे लगभग 9 महीन रेतीली हवाये चलती रहती है जिससे 90 मीटर तक ऊंचे रेत क टीले बन जाते है। विश्व के बड रेगिस्तानो मे से यह एक है।

दक्षिणी-पूर्वी पठारी भाग

दक्षिणी-पूर्वी राजस्थान का पठारी भाग उपजाऊ है क्योकि इसमे बहने वाली कई नदियां यथा लूनी, चम्बल, बनास (जो चम्बल नदी की एक सहायक नदी है) कालीसिंध, पार्वती तथा बाणगगा आदि भूमि का सिंचन करती रहती हैं। राज्य के इस भाग म कई पहाडिया भी है। यहा की घाटियाँ उपजाऊ है तथा मिट्टी उपयुक्त है।

यहाँ प्राप्त होने वाली मिट्टी मे सबसे प्रमुख लाल मिट्टी है। यह मिट्टी उदयपुर और डूगरपुर जिलो मे पायी जाती है। काली मिट्टी मे गीलापन होता है तथा यह उपजाऊ है। 50 से 75 सें० मी० वर्षा मे विभिन्न प्रकार की फसलो को उगाने मे सुविधा होती है। इसके अलावा लाल तथा काली मिश्रित-मिट्टी पीली तथा लाल मिट्टी मिलती है जो बहुत उपजाऊ होती है। राजस्थान के इस क्षत्र मे वर्षा खूब होती है। यहा अनेक किस्म की मूल्यवान लकडी होती है। इस क्षत्र के लोग स्थायी निवास बनाकर रहते हैं। इन्हें भोजन और पानी की तलाश मे भटकना नही पडता क्योकि यहा पर्याप्त वर्षा होती है।

इन भौगोलिक भूखण्डो का अपना एक दीघकालिक नैसर्गिक इतिहास है। विभिन्न भूगर्भीय काला मे अनेक महत्वपूण परिवतन आये जिनसे विभिन क्षेत्रा के धरातल की रचना मे अन्तर आया। इस दृष्टि मे राजस्थान का पश्चिमी मरुस्थलीय भाग अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। जसलमेर, बीकानेर का मरुस्थलीय भाग जूरासिक (Jurassie) क्रीटेशियस (Cretasceous), और इयोसीन (Eocene) कालो म अधिकाशत समुद्रावृत था। यह समय का विषय है कि ठीक किस समय इस क्षत्र मे उभार आया और सागर मरुस्थल के रूप मे परिवर्तित हुआ। सभवत तृतीयक (Tertiary) के उत्तर काल मे ऐसा हुआ होगा।[1] भूगर्भीय परिवतनो से जुड भौगोलिक और जलवायुगत परिवतनो के साक्ष्य भी राजस्थान मे उपलब्ध हुए हैं।[2] प्रातिनूतन (Pleistocene) काल के प्रारम्भ मे भी अनेक जलवायुगत परिवतन हुए हैं। यह वह काल है जब विश्व और भारत मे भी मानव के

---

1 इण्डन, एम एस इवोल्यूशन आफ डजट पो सिम्पो राज डेजट बु ने सा ई, जिल्द I (1952) प 19

2 द्रष्टव्य वकशाप आन दी प्राब्लम्स आफ दी डेजट इन इण्डिया सितम्बर 16–18 1975 जयपुर (अप्रकाशित शोध-पत्र),

वकशाप आन पलियोक्लाइमेट एण्ड आर्कियालाजी आफ राजस्थान एण्ड गुजरात, फिजिक्ल रिसच लेबोरेटरी अहमदाबाद, 23–26 फरवरी 1976, इकोलाजी एण्ड आर्कियोलाजी आफ वेस्टन इण्डिया (1977) सपा धमपाल अग्रवाल एव डी एम पाण्ड।

प्रथम अवशेष प्राप्त होने लगते हैं। भूगर्भीय कालो मे सबसे अन्तिम अतिनूतन (Holocene) काल है। इसका प्रारम्भ प्राय 10 000 वर्ष पहले हुआ। तब से आज तक कोई उल्लेखनीय परिवर्तन जलवायु की दृष्टि से नही माना जाता तथापि छोटे स्तर पर किसी क्षेत्र विशेष मे जलवायु परिवर्तन और उससे जुड़ मानव संस्कृति के विकास मे अनेक उथल पुथल दृष्टिगोचर है, विशेषकर पश्चिमी राजस्थान म जहाँ होलोसीन युग मे ही सिंधु सभ्यता का उदभव, विकास और विनाश होता है और पुन समयान्तर स उन्ही क्षेत्रो म नई संस्कृतिया विकसित होती है। पुरातात्विक संस्कृतियो का उत्थान पतन बहुत कुछ जलवायुगत परिवर्तन से जुड़ा हुआ है।

प्रागैतिहासिक काल

राजस्थान मे प्रागैतिहासिक काल के अवशेषो का व्यापक वैज्ञानिक शोध सीमित स्तर पर हुआ है। इन अध्ययनो और सर्वेक्षणो स इतना स्पष्ट है कि प्रातिनूतन काल म इस प्रान्त के कतिपय क्षेत्रो ने मानव को आकर्षित किया विशेषकर दक्षिणी पूर्वी राजस्थान ने। लूनी बनास, चम्बल और उसकी सहायक नदियो के तटवर्ती क्षेत्रो म पाषाण युगीन उपकरणो की उपलब्धि इस प्रमाणित करती है। मरुस्थलीय क्षेत्रो मे भी पाषाणयुगीन कुछ अवशेष मिल हैं।[1] मरुभूमि मे सर्वेक्षण काय अत्यन्त कठिन है और संभावना की जाती है कि प्रस्तरयुगीन अवशेष बालू की मोटी परतो मे दबे है। गहन अध्ययन के बाद इस प्रदेश के पूर्व ऐतिहासिक काल को तीन प्रमुख भागो म बाटा जा सकता है।

1 निम्न पुरापाषाण युग (Lower Palaeolithic or Early Stone Age)

निम्न पुरापाषाणयुग की खोज का इतिहास करीब 100 साल पुराना है जब सी० ए० हक्स्ट जो भारत सरकार के भूगर्भ विभाग स

---

1 मोहापात्रा, जी सी एव अन्य दा डिस्कवरी आफ ए स्टान एज साईट इन दी इण्डियन डजर्ट रिसर्च बुलेटिन (न्यू सीरीज) ऑफ दी पजाब यूनिवर्सिटी, जिल्द 14 पार्ट 3-4 पृ 215-223 सितम्बर, 1963।

स्पटिक पत्थरो से बनाए गए है। विराट नगर मे बडी मात्रा मे स्पटिक फलेक्स प्राप्त किये जाते हैं। पिछले पन्द्रह वर्षों से राजस्थान भूप्रदेश पर मध्य पाषाणयुगीन स्थल काफी सख्या म उपलब्ध हुए हैं। मुख्य रूप मे इस युग के स्थल उदयपुर[1] के निकट बेडच नदी के तट पर पाये गये हैं लेकिन इनका विस्तार भीलवाडा[2] के पास बनास नदी तक है। अजमेर[3], टोक[4], कोटा[5] व झालावाड[6] जिलो मे भी इस सस्कृति के कुछ स्थल मिले हैं। इस युग का सबसे समृद्ध स्थल बागार है।[7] केवल इसी स्थल का क्षैतिज उत्खनन किया गया है।

3 नव पाषाण युग

नव पाषाण युग के अवशेष इस क्षत्र मे स्पष्ट रूप मे आज तक सूचित नही है।

सारांश

प्रागैतिहासिक युग मे सस्कृतियो का विस्तार दक्षिण पूर्व से पश्चिम और उत्तर की ओर दिखाई पडता है। राजस्थान की पाषाण युगीन सस्कृतियो का समवाय गुजरात और मध्य प्रदेश की समकालीन सस्कृतियो से है।

---

1 आई ए आर, 1956-57, पृ 6, 8, वही, 1959-60, प 40।

2 वही, 1957-58, प 44-45, वही, 1958-59, प 43 1959-60, प 40।

3 आइ ए आर 1958-59, प 43।

4 वही।

5 मिश्रा, वी एन एव नागर एम टू स्टोन एज साइट्स आन दी चम्बल राजस्थान, बु डे का रि इ खण्ड 22, प 156-169 आई ए आर 1957-58, प 69।

6 आई ए आर 1955-56, प 69।

7 मिश्रा, वी एन बागोर—ए लट मेसोलिथिक सेटलमण्ट इन नाथ वेस्ट इण्डिया, वल्ड आर्कियोलाजी, जिल्द 5, प 92-110।

पुरेतिहासिक काल (Prohistoric Age)

इस काल के प्राचीनतम अवशेष सिंधु सभ्यता और उससे पूर्व की नगरीय तथा ग्राम्य संस्कृतियों के रूप में प्राप्त होते हैं। इस काल की सभ्यता और संस्कृति का विस्तार उत्तरी-पश्चिमी सीमान्त प्रदेशों से राजस्थान की ओर दिखाई पडता है। पुरेतिहासिक काल की संस्कृतियों का क्रम इस प्रकार है —

1–प्राक् सिन्धु सभ्यता काल

इस काल की खोज की एक महत्वपूर्ण व विशिष्ट उपलब्धि भारत व पाकिस्तान में प्राक् सिन्धु सभ्यता के काल खण्ड की है।[1] इसमें दो स्थल सिन्ध[2] में, दो उत्तरी पश्चिम सीमा पर तथा एक स्थल राजस्थान[3] में मिला है। लेकिन सिन्धु घाटी की इन संस्कृतियों के कई अवशेष अभी भी पृथ्वी के गर्त में दबे हुए हैं। प्राक् सिन्धु स्थल केवल सिन्ध तथा पंजाब तक ही सीमित नहीं थे वरन उत्तरी राजस्थान में भी थे।[4] प्राचीन सरस्वती एवं दृषद्वती के किनारे अनेक स्थल प्रकाश में आये हैं जिनमें घर घर नदी के दक्षिणी किनारे पर कालीबंगा[5] (जिला गंगानगर) भी है। यहा पर करीब चौथाई किलोमीटर के क्षेत्र में एक टीले पर प्राचीन आवासीय स्थल के अवशेष दृष्टिगोचर होते है। यहा से मिट्टी की ईटें, मृदभाण्डों के टुकडे काफी संख्या में मिले है। कालीबंगा प्रथम काल से प्राक् सिन्धु सभ्यता के अवशेष मिलते हैं। यहा पर मिट्टी की ईटें जिनका माप 30×20×10 से मी है, के मकान मिले हैं। यहा से प्राप्त चूल्हे आधुनिक बीकानेर क्षेत्र के तंदूर जैसे है।[6] यह स्थल मिट्टी की ईंटों से बनी एक चार-दीवारी से घिरा हुआ

---

1 सांकलिया, एच डी प्रा भा इ पा (1974) पृ 331
2 देलिस, वाल्टर, ए स ज एभ एस यू बी खण्ड 15 (1961), पृ 26
3 वही
4 सांकलिया, एच डी प्री प्रा इ पा (1974), पृ 342
5 वही
6 लाल, बी बी एव थापर, बी के एक्सकेवेशन्स एट कालीबंगा कल्चरल फोरम, जुलाई 1967, पृ 80 आई ए आर, 1962-63, पृ 20

था। इस काल के निवासियो के दैनिक उपयोग के औजार अगेट, कान लियन आदि के बने थे जो बागौर के लघुपाषाणीय उपकरणो के समान थे। यहा से प्राप्त मृद्भाण्ड पतले, गुलाबी रग के तथा कम तपाये हुए थे। प्राप्त अवशेषो के आधार पर कहा जा सकता है कि प्राक् सि धु सभ्यता नगरीय सभ्यता थी।

2–सिन्धु सभ्यता

प्राचीन सरस्वती एव दपद्वती नदी के किनारो पर अनेक सिन्धु सभ्यता के स्थल खोजे गये लेकिन उनमे से केवल एक ही स्थल (कालीबगा) का श्री बी बी लाल तथा बी के थापर के निर्देशन म उत्खनन किया गया। यहाँ सिन्धु सभ्यता की विशिष्ट विशषताए देखने को मिलती हैं।[1] इस टीले का पश्चिमी भाग दुग क्षत्र तथा पूर्वी नगर क्षत्र था। नगर क्षेत्र मे सडकें शहर के एक किनारे से दूसरे किनारे को जाती थी और एक दूसरे को समकोण पर काटती थी। दैनिक उपयोग की अन्य वस्तुओ के साथ मदभाण्ड तथा मृत्तिका उद्योग के अवशेष, आभूषण, पत्थरो, ताबे व कासे के औजार, खिलौने, सील, तोलने के बाट आदि आवास क्षेत्र से मिले है।

मृदभाण्ड

कालीबगा के उत्खनन से मिट्टी के कई प्रकार के बतन और उसके अवशेष मिले हैं। यहा के बतनो की विशेषता मे उनका पतला एव हल्का होना है। ये मद्पात्र चाक पर बनाये जाते थे। ये पात्र लाल रग के हैं तथा इन पर विभिन्न प्रकार के अलकरण हैं। मृदपात्रो मे घडे, प्याले, लोटे, हाडिया, तश्तरिया आदि मुख्य हैं।

3—आहाड या बनास सस्कृति

जिस समय पजाब, सि ध, गुजरात तथा उत्तरी राजस्थान मे सिन्धु-सभ्यता पूण रूप से व्याप्त थी उस समय दक्षिणी पूर्वी राजस्थान

---

1 आई ए आर, *1960-61*, पृ *31–32* वही, *1962 63* पृ 20–31 वही, 1963–64, पृ 30–39, वही, 1964–65, पृ 38–41, वही, 1966–67, पृ 31–33 वही, 1967–67, पृ 42–45, वही, 1968–69, पृ 28–32।

म जिस सस्कृति का उदय हुआ वह आहाड या बनास सस्कृति के नाम से जानी जाती है।[1] इस सभ्यता का पता सबसे पहले उदयपुर नगर मे चार किलोमीटर पूव की ओर आहाड नामक गाँव के पास लगा था। बनास एव उसकी सहायक नदियो के तटवर्ती प्रदेश मे इस सस्कृति के अनेक स्थल पाये गये हैं।

भौगोलिक दृष्टि से आहाड पवतो की शृ खलाओ से घिरा हुआ है तथा इस क्षेत्र म अनेक खनिज पदाथ भी मिलते हैं। आहाड सस्कृति यह प्रमाणित करती है कि मानव सुरक्षित स्थान की खोज मे भटकता हुआ पवतो से घिरे इस स्थल पर आ पहुचा जहा अनेक खनिज पदाथ, पर्याप्त वर्षा और नदी तट था। 1954 मे रत्नचन्द्र अग्रवाल ने इस स्थल की सवप्रथम खोज की और प्रमाणित किया कि प्राय दो हजार ई पू मे यहा एक ऐसी सस्कृति थी जो न तो सिन्धु सभ्यता जसी थी और न ही राजस्थान, मध्यप्रदेश तथा महाराष्ट्र की समकालीन ताम्रपाषाणीय सस्कृतियो जैसी। यह स्वय मे एक विशिष्ट सस्कृति थी जिसे हम ताम्रयुगीन सस्कृति कह सकते हैं क्योकि इसके अवशेषों मे एक ओर जहा ताँबे के औजार और आभूषण मिलते हैं, वहा लोहे की एक भी वस्तु नही प्राप्त हुई।

आहाड सस्कृति से सम्बन्धित करीब अस्सी अन्य स्थल दक्षिणी-पूर्वी राजस्थान मे ही बनास तथा चम्बल नदी के किनारो पर पाये गये हैं। यह सभी स्थल इस बात की ओर सकेत करते हैं कि इस सस्कृति का विस्तार काफी दूर तक था। कच्छ की घाटी मे सूरकोटडा[2] और अहमदाबाद जिले मे लोथल[3] के उत्खनन मे इस सस्कृति से मिलती-जुलती वस्तुए विशेषकर काले और लाल मृद्भाण्ड जिन पर सफेद रग के अनेक चित्र अकित हैं प्राप्त हुए है।

---

1 मांकलिया, एच डी प्री प्रा इ पा (1974), प 404

2 जोशी, जगतपति एक्सप्लोरेशन इन कच्छ एण्ड एक्सकवेशन ऐट सुरकोटडा एण्ड न्यू लाइट ऑन हड़प्पन माईग्रेशन, ज ओ ई जिल्द 22, अक 1–2, प 98–144

1 ललित कला, अक 11 (1962), प 14–30

आहाड प्राय 50 फीट ऊंचा 1600 फीट लम्बा तथा 500 फीट चौडा एक टीला है। इस टीले पर लोगो ने अनेक बार बस्तिया बसायी। सपूर्ण निक्षेप दो कालखण्डो मे और प्रत्येक कालखण्ड पुन उपकालखण्डो मे विभाजित किया जाता है।

आवास

प्राप्त अवशेषो के आधार पर कहा जा सकता है कि यहा के निवासी शिष्ट (Schist) पत्थर से मकान की नीव भरते थे। शिष्ट पत्थर आहाड के आसपास बहुतायत से मिलता है। मिट्टी की दीवारो पर बासो के सहारे चटाइयाँ लगाकर मकान बनाते थे जिसे झोपडी की सज्ञा दी जा सकती है। मकानो की फर्श चिकनी मिट्टी मे पीली मिट्टी बनाकर बनाये जाते थे। मकान मुख्यत आयताकार होते थे। उनमे दो या तीन कमरे तथा एक रसोई होती थी। रसोई के पास दो या तीन मुह वाले चूल्हे तथा सिलबट्टे मिलते है।[1] सिल बलुये पत्थर की बनी होती थी। यह पूर्ण रूप से नही कहा जा सकता कि आहाड का पुरतिहासिक मानव चावल का प्रयोग करता था लेकिन विष्णुमित्र[2] के अनुसार आहाड मे आधुनिक देहरादून के लम्बे चावलो की कोटि का चावल होता था। उत्खनन मे रसोईघरो के पास मछली, गाय, बकरी, हिरन आदि की हड्डिया मिली हैं जिसके आधार पर कहा जा सकता है कि वे मासाहारी भी थे।[3] आहाड सस्कृति की अन्य वस्तुओ मे लाल मृद्भाण्ड, काले-और-लाल मद्भाण्ड, पकी मिट्टी के मनके, कर्णाभूषण वलय, बहुमूल्य पत्थर के मनके तथा ताबे के छल्ले, चूडिया चाकू, सुरमे की सलाई व कुल्हाडियाँ आदि मिली हैं।

आहाड पुरतिहासिक काल मे एक ऐसा केन्द्र था जहा कुछ विदेशी जातियाँ जो मकान बनाना, धातु गलाना आदि जानती थी, प्राकृतिक सम्पदा से आकर्षित होकर यही बस गइ।

---

1 साकलिया, एच डा इ प्रो प्रो इ पा (1974) पृ 407

2 वही

3 वही, पृ 409

4—गेरुये रग के मृद्पात्रो वाली संस्कृति तथा ताम्रनिधिया

पिछले करीब तीन दशको से पुरातत्ववेत्ताग्रो ने व्यापक सर्वेक्षण कर गेरुये रग के मृदपात्रो की समस्या को सुलझाने का प्रयास किया है। गेरुये रग के मृदपात्र सर्वप्रथम हस्तिनापुर के निम्नतम स्तर से प्राप्त हुए तत्पश्चात् ग्रहिच्छत्रा (जिला बरेली) तथा ग्रतरजीखेडा (जिला एटा) से प्राप्त हुए। ग्रतरजीखेडा तथा उत्तरी-पश्चिमी भारत के कई ग्रन्य स्थानो से इन पात्रो के टूट फूटे टुकडे ही प्राप्त होते हैं।[1] गेरुये रग के मृदपात्रो का विस्तार हरिद्वार के निकट बहादराबाद से नोह (जिला भरतपुर) तक तथा जालधर के निकट कातपलाव से ग्रहिच्छत्रा (जिला बरेली) तक हैं।[2]

राजस्थान मे गेरुये रग के मृदपात्र राजस्थान सरकार के पुरातत्व एव सग्रहालय विभाग के निदेशक श्री रत्नचन्द्र अग्रवाल के निर्देशन मे नोह के उत्खनन से प्राप्त हुये जो इस पात्र-परम्परा की दक्षिण-पश्चिमी सीमा का निर्धारण करते हैं।[3] 1964 65 मे नोह की एक खाई मे विजयकुमार को गेरुये रग के मृदपात्र काले-और-लाल रग के मृदपात्रो वाले स्तर के नीचे प्राप्त हुये।[4] उत्खननो से यह सिद्ध हो गया है कि यह पात्र परम्परा नोह के प्रथम कालखण्ड की है। इस पात्र परम्परा की तिथि लगभग 1300 ई०पू० ग्राकी गई है।[5] यहा पर इस पात्र-परम्परा मे मुख्यत कटोरिया, घडे तथा हत्थो के कुछ टुकडे प्राप्त हुए हैं।

जयपुर से 98 कि मी उत्तर पूर्व की ग्रोर जोधपुरा के उत्खनन मे प्रारम्भिक स्तरो से गेरुये रग के मृदपात्र मिले हैं। जोधपुरा (जयपुर) तथा नोह (भरतपुर) से इस पात्र-परम्परा का मिलना काफी महत्त्वपूर्ण

---

1 दव, शा मा (सपा) ग्राकियोलाजिकल काग्रेस एण्ड सेमिनार पपस्, (1972), पृ 168

2 मालकिया, एच डी प्रो प्रो इ पा (1974), पृ 397

3 विजयकुमार पुरातत्व, न 5 (1971), पृ 43—44

4 वही

5 वही पृ 44

धूसर चित्रित मदपात्र श्रावस्ती, अतरजीखेडा तथा रूपड आदि स्थानो स भी मिले है। पर तु राजस्थान मे विराटनगर, नोह तथा जोधपुरा इस सस्कृति के मुख्य केन्द्र माने गये है। विराटनगर[1] मे सन 1962 63 म एन आर बनर्जी एव के एन दीक्षित को उत्खनन के दौरान ये पात्र मिले। नोह[2] तथा जोधपुरा[3] के तीसरे काल से भी ये पात्र मिलते ह ऐतिहासिक युग के निर्माण मे इस मृदपात्र को नींव के पत्थर के समान समझा जाता है क्योकि लोह का प्रथम प्रयोग अपेक्षया प्रचुर मात्रा मे इसी युग के निर्माताओ ने किया था जिसने भारत के ऐतिहासिक क्षितिज पर क्रान्तिकारी परिवतन किये और विकास के एक ऐसे युग को ज म दिया जिसमे आगे चलकर लिपिशास्त्र का ज म हुआ, रक्षा के विविध साधन उपलब्ध हुये और एक ऐसे युग का निर्माण हुआ जिसे एतिहासिक युग कहा जा सकता है। उत्तरी राजस्थान मे इस पात्र परम्परा की उपस्थिति प्रारम्भिक ऐतिहासिक युग की उपस्थिति का बोध कराती है। राजस्थान मे इस पात्र परम्परा वाली सस्कृति के लोगो न सि धु सभ्यता के लोगो की ही भूमि पर कब्जा न कर अपन लिय नये स्थान को चुना।

---

1 आई ए आर 1962–63, प 25–26

2 वही 1962–63, प 18

3 विजयकुमार 'एक्सकैवशन्स एट जोधपुरा' जिला जयपुर (समरी पेपर) राज हिस्ट्री काँग्रेस, पाली सशन, 1973, पृ 16–18

अध्याय--2

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

पुरातत्व एव इतिहास के विद्वानो के अभिमत मे ऐतिहासिक पुरातत्व की सीमारेखा प्राय छठी शताब्दी ई पू से प्रारम्भ होती है। इस काल से इतिहास निर्माण के लिए हमे न केवल बौद्ध जन और वदिक साहित्य के रूप मे लिखित सामग्री उपलब्ध होने लगती है अपितु समसामयिक विश्व विशेषकर ग्रीक और पर्सियन इतिहास की अनेक घटनाओ से भी सपुष्टि होती है। इसके कुछ समय पश्चात ही मुद्रायें, शिलालेख तथा सिक्के भी प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध होने लगते हैं। इस प्रकार राजस्थान मे प्रारम्भिक ऐतिहासिक युग का अध्ययन पुरातात्विक स्रोतो के आधार पर करने के लिए हमे एक विशाल सामग्री उपलब्ध है। राजस्थान के ऐतिहासिक पुरातात्विक साक्ष्यो के अध्ययन के पूव यहा की राजनैतिक इतिहास की सक्षिप्त रूपरेखा प्रस्तुत करना समीचीन होगा।

प्राचीन भारतीय वाङगमय का पूवपराक्रम निर्धारण और तिथ्याकन एक जटिल समस्या है। इसका सबसे प्रमुख कारण है रचना काल के काफी समय बाद उनका लिपिबद्ध किया जाना और घटना या कथा को समसामयिक तथा सोद्देश्य बनाने के लिए उसमे क्षपक का समावेश करना। इन परिस्थितियो मे राजस्थान के प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल की किसी घटना का निरूपण करते समय साहित्यिक साक्ष्यो का उपयोग विवाद से परे नही हो सकता। प्रारम्भिक बौद्ध साहित्य की सास्कृतिक एव ऐतिहासिक सामग्री बुद्ध के जीवन काल के आसपास स्वीकार की जाती है। बुद्ध से पहले राजस्थान मे अनेक

जन निवेश थे[1] जिनका सम्पर्क सीमावर्ती हरियाणा, पजाब एव पश्चिमी उत्तरप्रदेश से था। धूसर चित्रित मृद्‌पात्र परम्परा का क्षेत्रीय विस्तार इसकी पुष्टि करता है। बुद्ध का काल भारतीय इतिहास मे केवल धार्मिक क्रान्ति का सदेशवाहक ही नही है—इस काल से ही अथवा इसके किंचित पूव द्वितीय नगरीय पुन रुत्क्राति का सूत्रपात भी हो चुका था। अनेकानेक उद्योगो का विकास, व्यापार-वाणिज्य की प्रगति और दूर दूर तक जल-थल माग से सचरण करने वाले पृथुल सार्थवाहो के सदर्भो से बौद्ध साहित्य अटा पड़ा है।[2] व्यापार की प्रगति के सूचक आहत सिक्के इसी काल के पुरातात्विक स्तरो से सवप्रथम उपलब्ध होते हैं। अपण्णक जातक[3] निरुदक कान्तार (मरुभूमि) मे बोधिसत्व द्वारा सार्थवाह के साथ सचरण का उल्लेख करता है। ऐतिहासिक दृष्टि से विचार करें तो यह मरुभूमि राजस्थान मे स्थित होनी चाहिए। पर्सियन राजाओ द्वारा पश्चिमोत्तर भारत की विजय भी प्राय छठी-पाचवी शती ईसा पूव की घटना है जिसका उल्लेख ग्रीक इतिहासकारो ने किया है।[4] वसे निर्विवाद रूप से कहना कठिन है कि पर्सियन साम्राज्य से राजस्थान क्षेत्र का सम्पक किस सीमा तक था। 326 ई० पू० मे सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण किया। निरन्तर विजयो के उपरान्त भी वह कभी राजस्थान की सीमा तक नही पहुच पाया और न ही सिकन्दर के भारत आक्रमण के इतिहास मे राजस्थान का उल्लेख आता है।[5]

यूनानी काले आम से आतंकित वे जनजातिया जो सिकन्दर के विरुद्ध लड़ी थी और पुन स्वतन्त्रता प्राप्ति की इच्छुक थी, जिनमे मुख्य रूप से मलोई या मालव, सिबोई, एग्लासोई या अर्जुनायन थे, ने

---

1 पीछे अध्याय।

2 द्रष्टव्य महाजन, सरिता दी सकण्ड अरबन रिवोल्युशन, एम फिल (इतिहास) शोध प्रबन्ध 1978, राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर।

3 कौशल्यायन, भदन्त आनन्द जातक कथा, प्रथम खण्ड हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग 1942, प 123–36

4 द्रष्टव्य राय चौधरी एच सी पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ एशियन्ट इण्डिया, सप्तम सस्करण कलकत्ता यूनिवर्सिटी 1972 प 211–15

5 शर्मा दशरथ (सपा), राजस्थान थ्रू दी एजज, (1966), प 49

राजस्थान में आकर बसना उचित समझा। इन जनजातियों के साथ कई अन्य जातियाँ भी राजस्थान में आकर बसी लेकिन इनका सिकन्दर के भारत प्रयाण के इतिहास में कोई उल्लेख नहीं है। इस प्रकार राजस्थान में कुछ बड़े गणतन्त्रीय राज्यों का उदय हुआ।

भरतपुर और मथुरा के बीच राजन्य जनपद के कुछ सिक्के प्राप्त हुए हैं जिनमें ब्राह्मी लिपि में "राजन्य जनपदस्य" (राजन्य जनपद का) लेख उत्कीर्ण है।[1] बनावट की दृष्टि से यह सिक्के मथुरा क्षत्रपों के सिक्कों के समान हैं। माध्यमिका से प्राप्त तांबे के द्वितीय शताब्दी ई०पू० के सिक्कों पर ब्राह्मी में मझमिकाय सिबी-जनपदस्य अंकित है। जिससे यह निष्कर्ष निकलता है कि—

ईसा के जन्म से दो शताब्दी पूर्व चित्तौड़ से लगी हुई सीमा को सिबी जनपद कहा जाता था। उस समय शाल्व समूह के कुछ राज्य राजस्थान में थे। महाभारत में यह उल्लेख है कि आधुनिक अलवर शाल्व पुर का अपभ्रंश रूप है। अरावली के उत्तर-पश्चिम में भुलिंग लोग रहते थे जो कि शाल्व जाति की ही एक शाखा थे।[2] इस प्रकार शाल्व जाति उस समय के प्राचीन राजस्थान में चारों ओर फैली हुई जातियों में से एक थी।

अन्य गणतन्त्रीय राज्यों में मालव, अर्जुनायन तथा यौधेय मुख्य थे। 250 ई०पू० से 320 ईस्वी काल के बीच जब कुषाण शक्ति पतनोन्मुख थी उस समय उत्तरी भारत के भाग्य निर्धारण के लिये किसी मुख्य शक्ति के अभाव में ये गणतन्त्रीय राज्य ही चरम सीमा पर थे।

मालवों ने दक्षिण की ओर बढ़ने पर जयपुर क्षेत्र के नगराचल पर अधिकार कर लिया। उस समय इनकी राजधानी नगर थी जिसे मालव नगर के नाम से अभिहित किया जाता था। इसके ध्वंसावशेष उनियारा के पास हैं। यहाँ से प्राप्त तांबे के सिक्कों के आधार पर डा० डी० आर० भण्डारकर का कहना है कि ये लोग 150 ई० पू० में इस क्षेत्र में बसे होंगे।[3] लेकिन रढ़ के उत्खनन से इस बात की पुष्टि होती

---

1 उपाध्याय, वासुदेव भारतीय सिक्के, पृ 87 राजस्थान में प्रारम्भिक जनजातियों के इतिहास के लिए देखिये कल्याण कुमार दास गुप्त ट्राइबल हिस्ट्री आफ इण्डिया, नवभारत पब्लिशर्स कलकत्ता, 1974

2 इण्डियन हिस्टोरिकल क्वाटरली, जिल्द 1 पृ 257

है कि मालवा लोग इस तिथि से एक शताब्दी पूर्व ही बस गये थे। कालान्तर में मालवों ने अजमेर, टोंक तथा मेवाड़ क्षेत्र पर अधिकार कर लिया और प्रथम शताब्दी ई० के अन्त तक एक स्वतन्त्र शक्ति के रूप में पल्लवित होते रहे। पश्चिमी क्षत्रपों के बढ़ते हुए कदम से इनकी शक्ति कुछ समय के लिये दब गई लेकिन शीघ्र ही ये लोग पुनः स्वतन्त्र हो गये और इस विजय के उपलक्ष्य में इनके नेता श्री सोमा ने "एकषष्टि" नामक यज्ञ किया।[1] गुप्त सम्राट समुद्रगुप्त के समय तक ये स्वतन्त्र रहे। सम्भवतः कृत या मालव संवत् इन्हीं लोगों ने चलाया था। तत्कालीन समय में दूसरा मुख्य गणतन्त्र अर्जुनायनों का था जो मालवा से अधिक शक्तिशाली थे और अलवर व भरतपुर के बीच के क्षेत्रों में रहते थे। गणतन्त्रीय राज्यों में तीसरा स्थान यौधेयों का था जो उस समय राजस्थान के समकालीन गणतन्त्रीय राज्यों में सबसे अधिक शक्तिशाली थे। जन कथाओं के अनुसार रोहतक यौधेयों की राजधानी थी, यहीं से यौधेयों के साँचे में ढले हुए सिक्के भी मिले हैं लेकिन मात्र जन कथाओं के आधार पर यौधेयों की राजधानी रोहतक मान लेना समीचीन नहीं होगा। इनकी एकाधिक शाखायें और राजधानियां भी रही होंगी। सतलज नदी के दोनों किनारों की ओर बसा हुआ वह भूभाग जो आज भी जोहियावार या यौधेयों की भूमि के नाम से जाना जाता है, यौधेयों का एक अन्य राज्य था जिसका राजस्थान के कुछ भूभाग पर अधिकार रहा होगा। दूसरी शताब्दी ईसवी में यौधेयों का एक क्षत्रप रुद्रदामन से संघर्ष हुआ।[2] यद्यपि यौधेय इस संघर्ष में पराजित हुये तथापि रुद्रदामन यौधेयों के इस अभिमान को कि वे क्षत्रियों में सबसे वीर हैं न तोड़ सका। इस तथ्य की पुष्टि लुधियाना से प्राप्त मिट्टी की मुहर से होती है जिस पर यौधेयाना जयमन्त्रधराणाम् (म) अंकित है। जहां तक इन गणतन्त्रीय राज्यों की शासन प्रणाली का प्रश्न उठता है इसके बारे में अधिक ज्ञात नहीं है। विजयगढ़ (भरतपुर) अभिलेख में उल्लिखित मुखिया को महाराजा सेनापति ही

---

1 शर्मा, दशरथ राजस्थान थ्रू दी एजेज, पृ 52।

2 यौधेयना प्रासभ्रोत्सादकेन रुद्रदामन का जूनागढ़ अभिलेख, दिनेशचन्द्र सरकार, सलेक्ट इंस्क्रिप्शन्स, द्वितीय संस्करण, पृ 178।

उपाधि से विभूषित किया गया है, जिसकी नियुक्ति यौधेयगण द्वारा की गई थी। इस आधार पर यौधेयो की अतराजतत्रीय शासन प्रणाली मानी गई है। वैशाली गणतन्त्र के प्रमुख की उपाधि भी सेनापति ही थी। अन्य राज्यो मे इसकी सही स्थिति का ज्ञान नही है। पौराणिक काल मे विनशन के पास ही आभीर थे। कालान्तर मे जोधपुर के घटियाला क्षेत्र मे 9वी शताब्दी ईसवी में ये पुन दृष्टिगोचर होते हैं। आज भी रेवाड़ी के पास का इलाका अहीरवाटी के नाम से अभिहित किया जाता है।

राजस्थान के विराट नगर नामक स्थान के उत्खनन से मौर्यकालीन अशोक स्तम्भ तथा वृत्ताकार बौद्ध उपासना स्थल जो कि भारत मे प्राचीनतम मदिर है, प्राप्त हुए हैं जिनसे महान सम्राट अशोक का विराट नगर से सम्बन्ध होना निश्चित होता है।[1]

राजस्थान के सभी प्राचीन ऐतिहासिक स्थलो के उत्खनन से एव अनेक प्राचीन एतिहासिक स्थलो के धरातल से इण्डाग्रीक शासको की प्राचीन सामग्री प्राप्त हुई है। यहा यह उल्लेखनीय है कि इण्डाग्रीक शासको का ज्ञान केवल सिक्को से ही होता है। राजस्थान मे शक और कुषणो की उपस्थिति के भी प्रमाण मिलते हैं। मालवो के विरुद्ध उसवदत्त के अभियान तथा पुष्कर स्नान[2] के बाद भेंट किये गये विभिन्न उपहारो के आधार पर कहा जा सकता है कि क्षेत्र शको के राजनीतिक प्रभाव का क्षेत्र रहा होगा यद्यपि यहा शको का प्रत्यक्ष शासन नही था। कृत सवत् 295 के यूप अभिलेख के अनुसार कोटा क्षेत्र मे मोखरी वश का राज्य था।

समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति से 340 ई० के उत्तरी भारत की राजनीतिक स्थिति का आभास होता है। इस समय तक गुप्त साम्राज्य

---

1 साहनी, दयाराम आर्कियोलाजिकल रिमेन्स एण्ड एक्सकवेशन एट बराठ, जयपुर 1936।

2 ततोस्मिगता पोक्षरानि नहपान कालीन नासिक गुहा अभिलेख, दिनेशचन्द्र सरकार, पूर्वोक्त, पृ 169।

मगध और उत्तरप्रदेश तक ही सीमित था। पयत नाग राज्य सघ जिसका कि शक्तिशाली शासक गणपति नाग था की सीमा शुरू होती थी। समसामयिक अन्य राज्यो मे अनेक एकतत्रीय व गणतत्रीय राज्य थे जिसमे मालव, अर्जुनायन, यौधेय तथा आभीर मुख्य थे।[1] समुद्रगुप्त (335-365 ई) ने राजस्थान के राज्यो को सीमावर्ती समतट, उव्राक आदि राज्यो की माति कर तथा भेंट देने के लिये वाध्य किया।[2] इन राज्यो के प्रतिनिधियो को उसके दरबार मे उपस्थित होना पडता था।

अगली एक शताब्दी तक राजस्थान मे गुप्तो का प्रभाव वढा लेकिन हूणो ने जो पजाब और इसके आस पास के इलाका मे घुस आये थे, गुप्तो को शक्ति को क्षीण किया। ये श्वेत हूण अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए राजस्थान के प्रदेश से होकर गुजरे। दयाराम साहनी ने विराट नगर के उत्खनन मे बोद्ध मठो को नष्ट करने का दायित्व उन्ही श्वेत हूणो को दिया है।[3] इस मापाधापी मे कुछ हूण राजस्थान प्रदेश मे ही बस गये और राजस्थान की राजपूत जातियो मे विभिन्न सम्पक से समाहित हो गये। अल्लट के लेख मे मेवाड राजा का हूण रानी हरियादेवी से विवाह करने का उल्लेख है।[4]

हूणों के आक्रमण के पश्चात् क्या हुआ यह स्पष्ट नही है। सभवत हूण मालवा के राजा यशोवधन के राज्यपाल अभ्यदत्त द्वारा निष्कापित कर दिये गये क्योकि अभ्यदत्त द्वारा सीमावर्ती क्षेत्र,

---

1 वही प ।

2 नपतिभिम्मलिवाजु नायनयौधेय-भाउकाभीर --- सवकर दानानाकरण प्रणामागमन-समुद्रगुप्त की प्रयाग पशस्ति दिनशचन्द्र सरकार, पूर्वोक्त, प 265।

3 साहनी, दयाराम आर्कियोलाजिकल रिमन्स एण्ड एक्सकवेशन एट बराठ, (1936) जयपुर स्टेट, प ।

4 शर्मा, दशरथ (सपा) राजस्तान थ्रू दी एजेज, प 61।

अरावली पठार से नर्वदा नदी तथा पश्चिमी समुद्र तक राज्य करने का उल्लेख मन्दसौर अभिलेख में प्राप्त होता है।

प्रस्तुत प्रबन्ध में राजस्थान के विवेच्य काल की राजनीतिक पृष्ठभूमि के साथ तत्कालीन विभिन्न सांस्कृतिक धाराओं-धार्मिक सामाजिक तथा अन्य गतिविधियों का उल्लेख भी उपादेयकारी होगा।

छठी पांचवी शताब्दी ई. पू. तथा परवर्ती काल के पर्यालोचन से प्रतीत होता है कि तत्कालीन समाज में बौद्ध धर्म विकसोन्मुख था। भारतवर्ष में बौद्ध धर्म के बढ़ते हुए प्रभाव का कारण अशोक के काल में इसका राज्यधर्म का स्थान प्राप्त कर लेना था। ऐतिहासिक दृष्टि से यह भारत के लिए घातक ही सिद्ध हुआ क्योंकि अहिंसा को राजतन्त्र में स्थान मिल जाने के कारण देश की सैनिक शक्ति दुर्बल हो गई अतएव अनेक विदेशी शक्तियों को जिनमें यूनानी, शक व कुषाण प्रमुख थे, अवसर मिला कि वे एक कमजोर राष्ट्र (भारतवर्ष) पर आक्रमण करें। इन जातियों ने आक्रमण कर भारत में अपने साम्राज्य स्थापित किये। इन शक्तियों ने भारत को एक नये सांस्कृतिक धरातल पर ला खड़ा किया जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण पुरातात्विक उत्खननों के माध्यम से मिलता है। शुंग व कुषाण काल में मृद्पात्र उद्योग पर विदेशी प्रभाव पड़ा। गिरती हुई आर्थिक स्थिति के कारण अब उत्तरी भारतीय कृष्ण मार्जित मृद्पात्र एवं धूसर रंग के चित्रित मृद्पात्रों का प्रचलन पूर्णतः समाप्त हो गया था। अब साधारण कोटि के लाल पकाई हुई मिट्टी के मृदपात्र ही उपलब्ध होते हैं। जनसाधारण को बौद्धधर्म की अहिंसा के खोखलेपन का अनुभव हो गया था। वैदिक धर्मकाण्डों का पुनर्स्थापन उत्खनन के माध्यम से भी प्रमाणित होता है जिसमें सर्वाधिक उल्लेखनीय नोह (जिला भरतपुर) के उत्खनन से प्राप्त वैदिक हवनकुण्ड एवं पाप इलाम की मुद्रा है।

राजस्थान में शक और कुषाणों की उपस्थिति के भी हमारे पास प्रमाण हैं। शनैः शनैः कुषाण संस्कृति भारतीय जीवन की मुख्य धारा में विलीन हो गई और भारतवर्ष में गुप्त साम्राज्य का प्रादुर्भाव हुआ जिसका आधार वही न्यायधर्म था, जिसकी पृष्ठभूमि में वीरभावना

थी। उन परमभागवत गुप्त सम्राटो ने देश को एक व्यवस्थित प्रशासन दिया जिसके फलस्वरूप राष्ट्रीय चेतना मे पुन जागरण का एकयुग आया, देश की सास्कृतिक जीवन का चरम विकास हुआ। इसी कारण गुप्त युग को स्वर्णयुग की सज्ञा दी गई है, साभर, रगमहल तथा बडोपल से प्राप्त सामग्री से इस कथ्य के पक्ष मे सम्बल प्रमाण मिलते हैं। इस समय जिस प्रकार के मदपात्र मिलते हैं वे कला की अनुपम कृतिया है, मणमूर्तिया तो इतनी सुन्दर है जैसी न पहले कभी बनी न बाद मे।

इस प्रकार राजस्थान का ऐतिहासिक पुरातत्व मानव विकास की दिशा मे एक मील के पत्थर के सदृश्य है। इसका विस्तृत अध्ययन राजस्थान के जनजीवन के सम्बन्ध मे महत्वपूर्ण जानकारी देता है। साथ ही भारतीय पुरातत्व की अनेक समस्याओ को समझने मे भी सहायता प्रदान करता है।

अध्याय–3

पुरातात्विक स्थल । उत्खनन, सर्वेक्षण

भारत के अन्य लोगो की भाति ही राजस्थान मे भी ऐतिहासिक युग का आरम्भ ई पू छठी शताब्दी से माना जाता है क्योंकि इसी समय से इतिहस निर्माण हेतु लिपिबद्ध सामग्री उपलब्ध होने लगती है। ऐतिहासिक युग के आरम्भ मे लिखित सामग्री के अतिरिक्त पुरातात्विक सामग्री भी प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध होने लगती है। लिखित सामग्री अथवा साहित्य का इतिहास निर्माण मे जो योगदान है उसकी सीमायें भी हैं। साहित्य सजन समाज के चन्द प्रबुद्ध व्यक्तियो की लेखनी का ही परिणाम है। इस कारण अनेक सास्कृतिक गतिविधियो का समावेश इन साहित्यिक ग्रन्थो मे नही हो पाता है और विशेष रूप मे उन गतिविधियो का समावेश नगण्य है जिसका सम्बन्ध सामान्य जन से है। भारत मे उपलब्ध साहित्य अधिकतर धर्माचार्यों अथवा धार्मिक क्रियाकलापो से सबद्ध रहा है। कभी कभी इसम शासक या समाज क अभिजात्य वग का उल्लेख मिलता है लेकिन जन सामान्य के क्रिया कलापो, सास्कृतिक गतिविधियो उनकी भौतिक उपलब्धिया का उल्लेख साहित्य मे अपेक्षया बहुत कम मिलता है। पुरातात्विक साक्ष्यों मे अभिजात्य वग क साथ ही जन सामान्य के क्रियाकलापो की झाकी भी मिलती है। अत यदि पुरातात्विक साक्ष्या के प्रकाश मे साहित्यिक साक्ष्यो का विश्लेषण किया जाय तो कुछ सीमा तक वास्तविकता का नीर-क्षीर किया जा सकता है।

राजस्थान मे पुरातात्विक शोध खोज की परम्परा लगभग एक शतक पुरानी है परन्तु पिछले तीन दशको मे सर्वेक्षण और उत्खनन

के क्षेत्र मे अभुतपूव प्रगति हुई है जिसमे सम्पूण राजस्थान के अनेकानेक पुरातात्विक स्थल प्रकाश मे आये हैं। प्राचीन पुरातत्व-वेत्ताओ एव आधुनिक पुरातत्ववेत्ताओ द्वारा उत्खनन तकनीक म काफी अन्तर है परन्तु दोनो ही प्रकार से किये गये उत्खनन राजस्थान के ऐतिहासिक पुरातत्व पर पर्याप्त प्रकाश डालते है। जिन स्थलो पर पुरानी तकनीक से उत्खनन हुआ है उनमे कनल हेण्डले द्वारा साभर[1] का उत्खनन, दयाराम साहनी द्वारा साभर[2] व बैराठ[3] का उत्खनन के एन पुरी द्वारा रेढ[4] का उत्खनन तथा भण्डारकर द्वारा नगरी[5] का उत्खनन है। आधुनिक उत्खनन मे पुरातत्व वेत्ता स्तरीकरण पर पर्याप्त बल देते हैं तथा इन स्तरो की तिथियो की जानकारी के लिए रेडियोकाबन विधि तथा अन्य वैज्ञानिक प्रणालियो का भरपूर प्रयोग करते हैं जबकि प्राचीन पुरातत्ववेत्ता इन सब आधुनिक विधियो से अनभिन थे। ऐतिहासिक पुरातत्व मे वह (प्राचीन पुरातत्ववेत्ता) केवल लिपियो एव सिक्को के आधार पर तिथिक्रम का निर्धारण करते थे। स्तरीकरण के अभाव म अनेक पुरावशेषो एव प्राचीन भवनो के तिथिक्रम पर प्रश्नचिन्ह भी लगाया जा सकता है। इतना सब होते हुए भी प्राचीन पुरातत्ववेत्ताओ ने राजस्थान मे जो काय किया है वह सराहनीय है।

नवीन उत्खनन तकनीक से विराटनगर तथा नगरी का पुन उत्खनन किया जा चुका है विराटनगर मे नील रत्न बेनर्जी तथा

---

1. हेण्डल, टी एच बुद्धिस्ट रिमन्स नियर साभर, ज रा ए सो ग्रे खण्ड 17 (1885) प 29।
2. साहनी, दयाराम आर्कियोलाजिकल रिमन्स एण्ड एक्सकवशन एट साँभर, जयपुर।
3. साहनी, दयाराम आर्कियालाजिकल रिमन्स एण्ड एक्सकवेशन एट बराठ जयपुर।
4. पुरी, क एन एक्सकवशन एट रढ, जयपुर।
5. भण्डारकर आर्कियालाजिकल रिमन्स एण्ड एक्सकवेशन ऐट नगरी मेमायस आफ दी आर्कियालाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, अक 4 (1920)।

कैलाशनाथ दीक्षित[1] एव नगरी मे के वी सौन्दराजन[2] ने पुन उत्खनन करवाये। इन उत्खननो का उद्देश्य साहनी तथा भण्डारकर द्वारा कराये कार्यों का वैज्ञानिक रूप से परीक्षण करना था। इन वैज्ञानिक व उत्खनन कार्यों के परीक्षण स्वरूप जो जानकारी मिली है वह पुराने उत्खननो के निष्कर्ष की पुष्टि करते है, साथ ही कुछ नवीन जानकारी भी देती है। श्रीमती हस्रारीड[3] ने रगमहल व कृष्णदेव ने नगर[4] (जिला टोक) मे प्राचीन ऐतीहासिक स्थलो के उत्खनन कराये। इनके अतिरिक्त एच डी साकलिया एव आर सी अग्रवाल ने आहाड[5] एव आर सी अग्रवाल ने भीनमाल[6] (जिला जालोर) जैसे ऐतिहासिक स्थलो का उत्खनन किया। आर सी अग्रवाल एव विजयकुमार ने नोह[7] (जिल भरतपुर) तथा जोधपुरा[8] (जिला जयपुर) मे भी उत्खनन का किया जिनसे वे ऐतिहासिक पुरातत्व के क्षेत्र का विस्तार हुआ है बी० बी० लाल के गिलुण्ड[9] उत्खनन मे भी ऐतिहासिक स्तरो व परिज्ञान होता है।

---

1 आई ए आर 1962–63, प 31।

2 वही, प 19–20।

3 हस्रारीड एक्सकवेशन ऐट रगमहल, 1952–54।

4 उत्खनन प्रतिवेदन अभी अप्रकाशित है।

5 साकलिया एच डी एक्सकवेशन ऐट आहाड, डेक्कन कालेज पूना, 19

6 अग्रवाल, आर सी एक्सकवेशन ऐट भीनमाल, आई ए आर 1953–54, प 12।

7 अग्रवाल, आर सी एव विजयकुमार एक्सकवेशन एट नोह, जिला भरतपुर, आई ए आर 1964–65, प 34–35, वही 1968–69, प 26, वही, 1966–67, प 30–31, वही, 1971–72, प 41–62, वही, 1970–71, प 31–32, वही, खण्ड 3–4 (1963–64), प 93–94, वही, खण्ड 7–9 रिसचर, (1966–68), प 7–9।

8 विजयकुमार एक्सकवेशन ऐट जोधपुरा, जिला जयपुर (समरी पेपर) रा हि का, पाली सेशन, 1973, प 16–18।

9 आई ए आर 1959–60, प 41–46।

इन सभी उत्खननो के आधार पर राजस्थान मे ऐतिहासिक युग की झाकी प्रस्तुत की जा सकती है। प्राप्त सामग्री एव अन्य तथ्यो का विश्लेषण यह स्पष्ट रूप से विनित कराता है कि ऐतिहासिक युग मे राजस्थान अनेक गतिविधियो का केन्द्र था।

अनेक अतिरिक्त सर्वेक्षण के द्वारा प्राचीन ऐतिहासिक टीलो की जानकारी प्राप्त होती है जिनकी सख्या 100 से भी अधिक है। अपने गर्भ मे अनेक पुरातात्विक सामग्री छुपाये ये टीले पुरावैज्ञानिको की कुदाल की प्रतीक्षा कर रहे हैं। आगे हम राजस्थान उत्खनित स्थानो का सक्षिप्त परिचय देगे।

नोह

भरतपुर जिले मे 27° 15' उत्तर अक्षाश व पूर्वी 77° 30' देशान्तर पर भरतपुर से 6 किलोमीटर दूर भरतपुर आगरा मार्ग पर स्थित है। यहा राजस्थान सरकार के पुरातत्व एव सग्रहालय विभाग आर० सी० अग्रवाल के निर्देशन में उत्खनन किया गया। नोह के उत्खनन से ऐतिहासिक युग के पुरातत्व की सामग्री प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध हुई है। नोह का तृतीय काल धूसर चित्रित मद्‌पात्र एव चतुर्थ काल उत्तरी भारतीय कृष्ण मार्जित मृद्‌पात्रो की समकालीन सस्कृति है। उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित मदपात्र के कटोरे तश्तरिया खण्डित एव अल्प सख्या मे उपलब्ध हुए। यहा से इस पात्र परम्परा का एक खण्डित गुलाबपाश उपलब्ध हुआ जो महत्वपूर्ण है। उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित मृद्पात्रो के साथ साथ पत्रि तथा खाद्य-पदार्थ एकत्र करने हेतु लाल रग के बडे मृदपात्र भी उपलब्ध हुए हैं। इस युग की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि मौर्यकालीन मृण्मूर्तिया हैं जो कि भारत के अन्य मौर्यकालीन प्राचीन स्थलो से मिलती जुलती है। इस काल मे नोह वासी पक्की ईटो के मकान बनने लगे थे। नोह से मौर्य युगीन भवना एव नगर व्यवस्था का पर्याप्त ज्ञान होता है। मौर्यकालीन नगरो मे सफाई की व्यवस्था के लिये चक्रकूपो का निर्माण किया गया है। नोह मे मौर्य युग की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि लोहे के विभिन्न उपकरो की है जिनमे कृषि सम्बन्धी उपकरण भी सम्मिलित हैं। नोह का पचम काल भारतीय इतिहास के शुग तथा कुषाण काल की सस्कृति की

झाकी प्रस्तुत करता है। शुग कुषाण के प्रतिनिधि मद्पात्रो के अतिरिक्त बडी सख्या मे मृण्मूर्तिया भी उपलब्ध होती हैं जो कि परवर्ती मौर्य-युगीन मृण्मूर्तियो से अनेक अर्थो मे भिन्न हैं।[1]

जोधपुरा

जोधपुरा (जिला जयपुर) का प्राचीन टीला 27° 31' उत्तरी अक्षाश, 76 5 पूर्वी देशान्तर जयपुर जिले की कोटपूतली तहसील मे जयपुर से 100 कि० मी० उत्तर पूर्व मे जयपुर–दिल्ली मार्ग से थोडा हटकर स्थित है। इस नदी का राजस्थान के ऐतिहासिक सस्कृतियो के विकास मे काफी महत्व है। इस टीले का एक नाम धरतुलघाट भी है जो शायद यहा के धरतुलदास नामक सन्यासी के नामपर पडा।

इस स्थल के उत्खनन का प्रमुख उद्देश्य चित्रित भूरे मदभाण्डो की तिथि के अध्ययन के बारे मे और अधिक तथ्य एकत्रित करना था। इस प्राचीन स्थल का उत्खनन राजस्थान शासन के पुरातत्व विभाग एव सग्रहालय द्वारा रत्नचद्र अग्रवाल के निर्देशन मे विजयकुमार द्वारा सम्पन्न हुआ।[2] जोधपुरा का चतुर्थ निवास काल मौर्य युग का प्रतिनिधित्व करता है जिससे कि हमे मौर्य युग मे प्रयोग होने वाले साधारण लाल रग के मृदभाण्ड मिलते है। जोधपुरा का पचम निवास काल शुग एव कुषाण काल से सम्बन्धित है।

विराटनगर,

विराटनगर जयपुर से 100 कि० मी० उत्तर-पूर्व लगभग आठ कि० मी० लम्बी तथा छ कि० मी० चौडी घाटी मे स्थित है। इस प्राचीन स्थल का उल्लेख बहुश महाभारत मे हुआ है। पाण्डवो ने अपने अज्ञातवास का अन्तिम वर्ष यही पर व्यतीत किया था। इस स्थल

1 अग्रवाल, आर सी एक्सकेवेशन एट नोह, आई ए आर 1963–64 पृ 29 वही 1964–64, पृ 35, वही 1966–67, पृ 30 31, वही 1968–69, पृ 26।

2 एक्सकेवेशन एट जोधपुरा, जिला जयपुर (समरी पपर) राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस, पाली सेशन 1963, पृ 16–18।

पर प्रारम्भिक खोज का कार्य कनिंघम, कारलाइल तथा भण्डारकर ने किया था। दयाराम साहनी ने 1937 में यहां पर वृहत स्तर पर उत्खनन कार्य करवाया।[1] साहनी द्वारा किये गये उत्खनन कार्य से उपलब्ध अवशेषों में बौद्ध मठ तथा बौद्ध मंदिर विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इस उत्खनन से प्राप्त अन्य महत्वपूर्ण पुरावशेषों में चर्ट के फलेक तथा कोर, आहत सिक्के, उत्तर भारत के कृष्ण मार्जित मृद्पात्र तथा अन्य समकालीन मृद्पात्र हैं। इन सभी साक्ष्यों के आधार पर विराटनगर को एक महत्वपूर्ण मौर्यकालीन प्राचीन नगर माना गया है। मौर्य सम्राट अशोक के दो स्तर लेख भी यहां से प्राप्त हुए। सन् 1962-63 में अनुसंधान की आधुनिक रीति से नील रत्न बनर्जी व कैलाश नाथ दीक्षित ने इस स्थल का पुनः उत्खनन करवाया।[2] इस उत्खनन का मुख्य उद्देश्य इस क्षेत्र में लोहे के प्रयोग सम्बन्धी तथ्यों की जानकारी प्राप्त करना था। इस उत्खनन के आधार पर निर्धारित किये गये कालक्रम के अनुसार प्रथम निवास काल में धूसर चित्रित मृद्पात्रों का प्रयोग होता था। द्वितीय निवास काल उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित मृद्पात्र परम्परा तथा तृतीय निवास काल ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों से सम्बन्धित है। इसके पश्चात् कुछ समय तक विराटनगर उजाड़ रहा। काफी लम्बे समय के पश्चात् मुस्लिम युग में पुनः यहां बस्तियां बसी। इस काल से चमकदार मुस्लिम ग्लेज पात्रों की उपलब्धि इस तथ्य को प्रमाणित करती है। विशेष ध्यान देने योग्य बात यह है कि विराटनगर में लोहे के प्रयोग के उदाहरण प्रथम निवास काल से ही मिलने लग जाते हैं।

सांभर

नलियासर जिले सांभर अथवा शाकम्भरी के नाम से भी अभिहित किया गया है, चौहान राजपूतों का एक प्रमुख केन्द्र था। सांभर जयपुर से लगभग 60 कि० मी० पश्चिम स्थित है। इस स्थल की प्राचीनता की ओर सर्वप्रथम तत्कालीन राजस्व विभाग के आयुक्त लायन का ध्यान

---

1 साहनी दयाराम आर्कियोलाजिकल रिमेन्स एण्ड एक्सकवेशन ऐट बराठ, जयपुर।

2 आई ए आर, 1962-63 व 31।

ग्राकपित हुग्रा । सन् 1885 मे कनल हेन्डले[1] ने परीक्षण के तौर पर इस स्थल का उत्खनन करवाया ग्रौर प्राप्त पुरावशेषो के ग्राधार पर इस निष्कप पर पहुँचे कि यह बौद्ध धर्मावलम्वियो का प्राचीन केन्द्र था । दयाराम साहनी[2] ने हेण्डले के मत से ग्रसहमति प्रकट करते हुए 1936-38 मे इस स्थल के एक वडे टोले जिसका माप 2000×1800 फीट था, उत्खनन करवाया । यहा के विभिन्न स्तरो से प्राप्त मनुष्य व पशुग्रो की मूर्तियों, ग्राहत सिक्के, यौध्ये, इण्डोग्रीक तथा कुपाण नरेश हुविष्क का एक तावे सामग्री के ग्राधार पर इस स्थल की तीसरी शताब्दी ई० पूव से ईसा काल की दसवी शताब्दी तक का ऐतिहासिक महत्व का केन्द्र सिद्ध करते हैं ।

नगर[3]

इस प्राचीन स्थल के उत्खनन से एक विकसित सभ्यता की जानकारी मिली है जो भारत मे प्रारम्भिक ऐतीहासिक युग का प्रति निधित्व करती है । यह यूनानी लेखको की मल्लोई तथा महाभारत र वणित मालवो की राजधानी (कार्कोट नगर) जिला टोक थी । उत्खनन से यहा विविध कलात्मक वस्तुए, व्यक्तिगत ग्राभूपण, लाह उपकरण, मिट्टी के वतन मुद्राये तथा विभिन्न माध्यमो मे ग्रगणित प्रतिमाये उपलब्ध है जिनमे ईसा पूव की प्रथम शती से लेकर ईसा पश्चात की दूसरी-तीसरी शती की ब्राह्मी लिपि मे "मालवानाम जय" लेख ग्रकित मिलता है । नगर कतिपय ऐसे भी सिक्के मिले हैं जिनकी धातु तावा है परन्तु 'मालवना जय" के स्थान पर कुछ विचित्र ग्रौर ग्रधुरे लेख जसे-गजव, गोजर, जमक, जमपय, मगछ, मगज, मगजस, मगोजय, मजुप, मपक, मग्रोजय, मरस, माशय, पछ, पय, यम, (मय) ग्रादि ग्रकित हैं । इनका ग्रथ विवाद का विपय है ।[4]

---

1 हैण्ड्ले टी एच पूर्वोक्त ।

2 साहनी, दयाराम ग्राक्यिोलाजिकल रिमेन्स एण्ड एक्सकवेशन ऐट सांभर जयपुर ।

3 विजयकुमार युग युगो मे राजस्थान (ग्रप्रकाशित पाण्डुलिपि से प्राप्त सूचना क ग्राधार पर) ।

4 द्रष्टव्य, दासगुप्त, कल्याणकुमार ए ट्राइवल हिस्ट्री ग्राफ इण्डिया, पृ 125, नवमारस प्रकाशन कलकत्ता, 1974 ।

मालव सिकों का आकार गोल तथा चौकोर, दोनों प्रकार का और अब तक के मिले उदाहरणों मे उनका वजन दो ग्रेन से लेकर 42 ग्रेन तक है। नगर उत्खनन से आहत सिक्के भी अच्छी सख्या मे उपलब्ध हुए हैं।

नगर की खुदाई कृष्णदेव के नेतृत्व मे हुई थी। यहा के उत्खनन का विवरण प्रकाशित नही हुआ है तथापि पुरातत्व सग्रहालय, आमेर मे यहा से उपलब्ध सामग्री रखी हुई है।

रेढ (रायढ)

रेढ टो जिले मे जयपुर से 27 कि० मी० दूर स्थित है। इस प्राचीन स्थल का उत्खनन 1938 मे के० एन० पुरी द्वारा हुआ।[1] यहा पर अनेक लघु टीले विस्तत क्षेत्र मे फले हुए है। इस स्थल के उत्खनन से प्राप्त सामग्री मे मिट्टी के मकान, अनेक लोह उपकरण, प्रचुर सख्या म पाषाण मनके, स्टीयाटाइट की वस्तुयें तथा विविध प्रकार की मृण्मय मूर्तिया सम्मिलित हैं जो शुग एव शुगोत्तर काल का प्रतिनिधित्व करती हैं। चुनार के बलुआ पत्थर का प्याला उपलब्ध पुरातत्वेषो के काल निर्धारण मे बडा सहायक है। यहा से प्राप्त सेलखडी की डिबिया उन डिबिया के समान है जिनम बौद्ध भिक्षुओ के अवशेष पाये जाते हे।

उत्खनन से यह स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है कि यह स्थान तीसरी शताब्दी ई० प० मे एक विकसित नगर था तथा दूसरी शताब्दी ई० तक पल्लवित-पुष्पित होता रहा। प्रारम्भिक गुप्त युग के कतिपय स्मृति चिह्न भी इस प्राचीन स्थल से उपलब्ध हुए हैं।

मालव सिक्के, मालव मुद्रायें एव आहत सिक्को की उपलब्धि से यह निष्कप निकाला गया है कि यह मालवों का एक प्रमुख केन्द्र था जा सम्भवत मौय व शुग शासको के अधीन राज्य करते थे। कुछ समय के लिये ये लोग स्वतत्र हो गये थे जबकि सेनापति श्रेणी के सिक्के वचघोष ने प्रसारित किये। मित्र नामधारी सिक्के भी यहा से मिले हैं। उनके विषय मे अनुमान लगाया जाता है कि यह शुगवशीय नरेशो

---

1 पुरी, के० एन० एक्सकवेशन एट रेढ, 1938।

के सिक्के हैं। रेढ़ से प्राप्त सूर्यमित्र ब्रह्ममित्र और ध्रुवमित्र प्रकार के सिक्के कन्नोज, पचाल और मथुरा से भी मिले हैं। रेढ से मिले सूर्यमित्र के सिक्को पर सूर्यमित्र के पहले उदेहिकी शुग युगीन ब्राह्मी लिपि मे अकित हैं तथा इसके पृष्ठ भाग मे नन्दिपद और सूप ध्वज अथवा त्रिकोणाकार ध्वज स्पष्ट रूप से अकित है। इस सिक्के का वजन लगभग 44 ग्रेन है। तथा आकार मे ये चौकोर हैं।

नगरी

प्राचीन स्थल नगरी का समीकरण शिवि जनपद की राजधानी माध्यमिका से किया गया है। यह चितोडगढ से उत्तर की ओर 13 किलोमीटर दूरस्थ है। इसकी सवप्रथम खोज सन् 1872 मे कारलाइल द्वारा की गई थी। सन् 1919-20 ई मे भण्डाकर ने इस स्थान का उत्खनन कराया जिसमे अनेक लेखयुक्त शिलायें, मण्डमूर्तिया, प्रतिमाय अलकरण युक्त इटें जिसमे पक्षियो की आकृतियां बनी हैं, ग्रीक रोमन प्रभावयुक्त पुरुष शीष आहत एव शिवि जनपद के सिक्के उपलब्ध हुये हैं।[1] शिवि जनपद के सिक्कों पर भण्डारकर ने मिझिमिकाय शिबि जनपदस् लेख पढा है। भण्डाकर के अनुसार माध्यमिका के शिबि जनो ने यह लेख उन शिवि लोगो से अपनी पृथक सत्ता प्रमाणित करने के लिये लिखा है जो पजाब मे रहते थे। नगरी में उत्खनन के आधार पर प्राचीन स्थापत्यकला के नमूने भी उपलब्ध हुये हैं, जिनमें हाथी बाडा नामक आहाता विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यह आहाता बडे-बडे पाषाण खण्डो द्वारा निर्मित हुआ है। सम्भवत यह आहाता घोषडा के शिलालेख में वर्णित सकर्षण मन्दिर को अपने में स्थान देता था।

1961-62 मे नगरी मे के० वी० सौन्दरराजन के द्वारा उत्खनन काय किया गया।[2] इसके आधार पर यह जानकारी मिली है कि प्राचीन नगरी की मुख्य बस्ती की सुरक्षा हेतु एक दीवार बनायी गई थी। इस

---

1 भडारक, डी आर आर्कियोलाजिकल रिमेस एन्ड एक्सकवेशन ऐट नगरी मेमायस आफ दी आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया अक 4 (1920)

2 सौन्दरराजन, के वी आई ए आर, 1962-63, प 19-20

दीवार का निर्माण सम्भवत ईसा सन् की प्रारंभिक शताब्दियो मे हुआ। कुछ समय के पश्चात इसे ईंटो के आधार द्वारा मजबूत बनाया गया। कुषाण काल से सम्ब ध रखने वाले चक्रकूप (Ring well) भी इस खुदाई से प्राप्त हुये हैं। सौन्दरराजन को खनन द्वारा इस स्थान से प्रचुर सख्या मे आहत सिक्के, मनके, गुप्त तथा शुग शैली की मृण्मूर्तिया उपलब्ध हुई है।

आहाड[1]

आहाड (जिला राना प्रताप नगर) उदयपुर रेल्वे स्टेशन से डेढ किलोमीटर दूर स्थित एक छोटा सा गाव है। इसे समय समय पर अनेक नामो से अभिहित किया जाता रहा है यथा, आघातपुर, ताम्रवती, नगरी तथा धूलकोट। मध्यकालीन शिलालेखो के अनुसार यह गुहिल राजाओ की राजधानी थी। इस स्थल की खोज तथा सव प्रथम उत्खनन आर सी अग्रवाल ने किया। अग्रवाल के इस उत्खनन के परिणाम-स्वरूप इस स्थल के पुरातात्विक महत्व की जानकारी हुई। 1961–62 म इस स्थल पर डा एच डी सांकलिया के नेतृत्व मे डक्कन कालेज पूना, पुरातत्व सग्रहालय विभाग, राजस्थान एव मेलबोन विश्वविद्यालय आस्ट्रेलिया के पुरातत्ववेत्ताओ ने वृहत् स्तर पर उत्खनन कराया।

यद्यपि आहाड का महत्व एक ताम्रपाषाण कालीन प्रचीन स्थल होने के कारण ही है तथापि इसके दूसरे काल से ऐतिहासिक युग के पुरावशप उपलब्ध होते हैं जो भारतीय इतिहास के शुग कुषाण काल के समकालीन हैं। इन पुरावशेषो उत्तरमजहया (अत्यन्त सीमित) इण्डाग्रीक सिक्के, कुषाणकालीन मन्डमूर्तिया, कुषाण राजाओ के सिक्के उपलब्ध ह। आहाड टीले का क्षैतिजिक उत्खनन नही हुआ है। जिसके कारण ऐतिहासिक युग मे आहाड नगर की सरचना की विस्तृत जानकारी नही प्राप्त होती है, परन्तु लम्बवत उत्खनन के आधार पर जा सीमित साक्ष्य उपलब्ध हुये है उनके प्रकाश मे यह निष्कय निकाला

---

1 सान्कलिया, एच डी व अय एक्सकवेशन एट आहाड (ताम्रवती) डक्कन कालेज पूना, 1969 अग्रवाल, आर सी, आई ए आर 1554 55, प 14 15, वही, 1955–56, प 14, वही 1961–62, प 50

गया है कि सपूरा नगर की सुरक्षा एक बडी दीवार के द्वारा होती थी। नगर मे सफाई की विधिवत व्यवस्था थी। इसका प्रमाण यहाँ पर उपलब्ध दो चक्रकूप देते हैं। आहाड के ऐतिहासिक स्तरो से ब्राह्मीलिपि मे अनेक मुद्रायें भी मिली है। उल्लेखनीय है कि यहा के मदपात्र मुख्यत लाल रग के शुग कुषाण पात्र है जिनमे सकल्प जलाशय (Vetive Tank) आदि प्रमुख है।

रगमहल[1]

कुषाण युग मे उत्तर राजस्थान के ग्राम्य जीवन की जानकारी सरस्वती तथा दृष्टवती नदी के काठे मे स्थित रगमहल के प्राचीन टीले के उत्खनन द्वारा प्राप्त होती है। यहा पर उत्खनन का काय श्रीमती हन्नारीड के नेतृत्व मे स्वीडिश आर्कियोलॉजिकल एक्सपेडीशन टू इण्डिया 1952–54 के बीच सपन्न हुआ। इस अभियान द्वारा न केवल राजस्थान अपितु इस युग के उत्तर-पश्चिम भारत के जनजीवन सम्बन्धी अधिकृत जानकारी उपलब्ध होती है जिसका उल्लेख साहित्यिक साक्ष्यो मे अल्प है। रगमहल के उत्खनन द्वारा प्राप्त मृद्पात्र गहरे लाल, गुलाबी तथा कभी-कभी पीलापन लिये हुए हैं। ये मृद्पात्र अधितर चाक पर बनाये गये हैं। पात्रो मे लोटे, तश्तरी, प्याले, गुलाबपाश (Sprinkler) आदि प्रमुख हैं जिन पर विविध प्रकार के अलकरण हैं। मिट्टी के विविध प्रकार के आभूषण विशेष रूप से उल्लेखनीय है। कुषाण शासको के सिक्के तथा आहत व गणराज्यो के सिक्के, मिट्टी की मुहरें भी मिली हैं। यहाँ की प्रमुख उपलब्धी कुषाण कालीन मकान है। राजस्थान की ऐतिहासिक सभ्यता के केन्द्रो म रगमहल सस्कृति अपना विशिष्ट महत्व रखती है।

भीनमाल

प्रारम्भिक ऐतिहासिक युग की सस्कृति का प्रतिनिधित्व करने वाले प्राचीन स्थानो में भीनमाल का अपना महत्व है। मारवाड अचल के जालोर जिले में अवस्थित इस ग्राम का जैन तथा सस्कृत साहित्य में अनेक बार उल्लेख हुआ है। निशीथ चूर्णी एव शिशुपाल वध में इस

---

1 हन्नारीड स्वीडिश एक्सपेडीशन टू इण्डिया, 1952–54

स्थान का विशेष उल्लेख हुआ है और सस्कृत कवि माघ का यह काय-क्षेत्र रहा है। इस स्थान के अन्य नाम रत्नमाला एव पुष्पमाल भी हैं। यह स्थान पूव मध्यकाल में गुजरो की राजधानी भी रहा है।

इस स्थान का उत्खनन रत्नचन्द्र अग्रवाल के नेतत्व में 1953-54 में सम्पन्न हुआ। यहा पक्की ईंटो से निर्मित मध्ययुगीन भवनो के अवशेष उपलब्ध हुए ह जो विशेष रूप से उल्लेखनीय हे। इन ईंटो का आकार 16 1/2 ×11×2 1/2 इच है। इस स्तर पर गहरे सलेटी तथा लाल रग पालिशयुक्त मृद्पात्र भी प्रचुर सख्या में मिलते हैं। भीनमाल मे गुप्तकालीन कला सौष्ठव की प्रतीक कतिपय प्रतिकायें भी उपलब्ध हुई ह। आर एम महता को यहा से रोमन ऐम्फोरा (मुरापात्र) भी प्राप्त हुआ है जो प्रथम शताब्दी ई० का है इस आधार पर प्राचीन भीनमाल का विश्व के अन्य देशो से व्यापारिक सम्बन्ध सिद्ध होता है।

इस स्थल पर यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि राजस्थान क पश्चिमी भाग में वमल सिक्को के प्रयोग का उल्लेख वृहत कथा कोप म आया है। इस आधार डा० दशरथ शर्मा की मान्यता है कि यह सिक्के भीनमाल के वमलात के होगे। किसी भी सस्कृति का प्रतिनिधित्व करने वाले सभी प्राचीन स्थानो का उत्खनन करना न तो सभव ही है और न ही आवश्यक। अतएव पुरातत्व वेत्ता किसी सम्कृति विशेष क कतिपय महत्वपूण प्राचीन स्थलो का उत्खनन कर समावित सस्कृति की जानकारी प्राप्त करते ह। अपरच, सस्कृति विशेष क प्रसार एव उनक समकालीन सस्कृतिया से तादाम्य स्थापित करने के लिए सस्कृति विशेष के प्रतिनिधित्व करने वाले स्थलो का खोज काय किया जाता है। राजस्थान मे कतिपय प्रमुख प्राचीन स्थलों के पुरातात्विक उत्खनन से जा जानकारी उपलब्ध हुई है उसका विवरण देने के पश्चात् सर्वेक्षण द्वारा ऐतिहासिक युग का प्रतिनिधित्व करने वाले प्राचीन टीलो की उपलब्ध जानकारी के आधार पर तालिका परिशिष्ट–1 में दी गई है जिसके आधार पर राजस्थान की ऐतिहासिक सस्कृतियो के प्रसार व अन्य पक्षो की जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

परिशिष्ट-1

राजस्थान के ऐतिहासिक पुरातत्विक स्थल

संक्षेपण सूची

का ला	काले और लाल मृद्पात्र (लोहयुगीन)
घू चि	घूसर चित्रित मृद्पात्र
घ	घूसर
उ कृ मा	उत्तरभारतीय कृष्ण मार्जित मृद्पात्र
शु	शुग
कु	कुषाण
गु	गुप्त

क्र स	जिला	पुरास्थल	सास्कृतिक विवरण	स दभ
1	अलवर	बीजवा	का ला, घू चि, शु, कु	रिसचर, खण्ड 5 6, 1964-65, पृ 61
2	भरतपुर	अवर	घू, चि, ला	आई ए आर, 1971 72 पृ 41,
3	,,	आघापुर	घू चि, शु, कु	रिसचर, खण्ड 5 6 1964 65, पृ 61
4	,	बचमदी	ला	वही
5	,,	बछनेरा	ला घू	वही
6	,	भेज	घू चि, शु, कु	वही

क्र स	जिला	पुरास्थल	सास्कृतिक विवरण	सन्दभ
7	भरतपुर	वारसो	ला	वही आई ए आर 1971-72 पृ 41
8	,,	भीमनगर	घू चि	आई ए आर 1970-71 पृ 81
9	,,	कॉमा	घू चि, शु कु	रिसचर पूर्वोक्त
10	,,	दारापुर	घू चि, का ला, कु मृ	आई ए आर, 1970 71 पृ 31
11	,,	इकराना	घू चि	वही
12	,,	केरवा	घू चि	वही
13	,,	केसोट	घू चि	वही
14	,,	कोरेर	घू चि	वही
15	,,	कवरडिया	घू चि, घू	वही
16	,,	गमरी	घू चि	आई ए आर 1971-72 पृ 41
17	,,	नितहार	गुप्तोत्तर	रिसचर, पूर्वोक्त
18	,,	नयोएय	ला, मृ	आई ए आर 1971-72 पृ 41
19	,	पेंगोर	गुप्तोत्तर	रिसचर
20	,,	परेभदारा	घू चि, का ला	आई ए आर 1970-71 पृ 31
21	,	रूपवास	गुप्तोत्तर	रिसचर, पूर्वोक्त
22	,,	सतार	घू चि	आई ए आर 1970-71, पृ 31,
23	,,	सतवास	ला मृ	आई ए आर 1971-72, पृ 41

क्र स	जिला	पुरास्थल	सांस्कृतिक विवरण	सन्दर्भ
24	भरतपुर	सुरोता	धू चि	वही
26	,	घेरिया	धू चि	वही
26	"	तोमरर	धू चि का ला	वही 1970 71, पृ 31
27	"	उंदरा	धू चि	आई ए आर 1971 72, पृ 41
28	"	उमरा	धू चि	वही 1970 71 पृ 31
29	"	वहाजा	धू चि का ला	वही, 1970 71 पृ 31
30	"	बमाना	गु	शर्मा, दशरथ (सपा) राजस्थान थ्रु दी एजेज 1966
				रिसर्च, पूर्वोक्त
31	जयपुर	अगासरी	धू चि शु कु	वही
32	"	गोदी	धू चि, कु कू मा शु कु	वही
33	"	कुरोली	धू चि, उ कू मा शु कु	वही
34	"	खेरा	धू चि, उ कू मा शु, कु	वही
35	"	मिहेसरा	?	वही
36	"	मारोली	गु	वही
37	"	रानीवास	गु	वही
38	"	राजनेता	गु	

क्र स	जिला	पुरास्थल	सांस्कृतिक विवरण	सन्दर्भ
39	जयपुर	सिकराय	धू चि, उ कृ मा, शु, कु	वही
40	सवाई माधोपुर	डेकुवा	शु, कु	परमार बी एम एस से प्राप्त सूचना के आधार पर
41	,,	गमोरे	शु, कु	वही
42	,,	गढखेरा	?, कु	वही
43	,,	कुणतला	शु कु	वही
44	,,	कुजेला	?, कु	वही
45	,,	सलावद	?, कु	रिसचर, पूर्वोक्त
46	,,	ननदौती	?, कु	वही
47	,,	उजड	?, कु	वही
48	,,	सेवा	?, कु	वही
49	,,	उदेई केला	शु, कु	वही
50	,,	छोटी उदई	?, कु	वही
51	,,	पिलौदी	?, कु गुप्तोत्तर	वही
52	टौंक	पचाला	शु ला कु ईंटें	आई ए आर 1971 72 पृ 41
53	टौंक	बयेली	?	रिसचर, पूर्वोक्त
54	,,	वेरोडिया	?	वही
55	,,	बुदावाली डूगरी	?, शु	वही
56	,,	देवपुरा	?	वही

क्र स	जिला	पुरास्थल	सास्कृतिक विवरण	सन्दर्भ
91	डूगरपुर	आमझरा	गुप्तोत्तर	राजस्थान शासन के पुरातत्व एव सग्रहालय विभाग द्वारा[1]
92	उदयपुर	छोटी सादडी	गु	आई ए आर, 19ɔ3 54, पृ 13
93	श्रीगगानगर	बडोपल	शु, कु, गु	शर्मा, दशरथ (सपा), पूर्वोक्त
94	,,	मुण्डा	?, गु	वही
95	,,	पीर सुल्तान के ढेरी	?	रिसर्च, पूर्वोक्त
96	,,	तारखाने वाला डेरा	धू चि, शु, कु	वही
97	,,	चक-84	धू चि	वही
98	,,	पीलीवगा	?	वही
99	सीकर	रानोली	शु, कु, गुप्तोत्तर	वही
100	झुझुनू	नरहर	शु, कु, गुप्तोत्तर	वही

1 प्रकाशित एक साइक्लोस्टाइल कापी के आधार पर।

अध्याय–4

प्राक् शुंग स्तर

पुरातत्व की दृष्टि से भारतीय वस्तु राजस्थान मे भी ऐतिहासिक काल का प्रथम चरण उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा के प्रारम्भ और उसकी समाप्ति के बीच स्वीकार किया जाता है। इस पात्र परम्परा की शुरुआत प्राय छठी शताब्दी ई० पू० या इसके किंचित पूर्व की है और अन्त प्राय दूसरी शताब्दी ई० पू० का। इस तथ्य की पुष्टि स्तरी करण और कार्बन-14 तिथि के आधार पर भी होता है। यह सयोग की बात है कि प्राय इसी काल मे (184 ई० पू०) मौर्य राजवश को समाप्त कर शुग शासनारूढ होते ह। इसी कारण प्रस्तुत अध्याय का नामकरण हमने 'प्राक शुग स्तर" किया है।

उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा पुरातात्विक इतिहास मे बहुचर्चित ही नही अपितु विशिष्ट भी है। जसा कि नाम से ही विदित है, इस कोटि मृद्पात्र बहुधा काले रग के ह तथा इनके बाहरी व भीतरी धरातल पर एक प्रकार का मार्जन (पालिश) प्रतीत होता है। प्रारम्भ में ये पात्र उत्तर भारत से ही प्राप्त हुये अस्तु इनका नाम "उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित मृदपात्र" पड गया।

उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित मृद्पात्र पुराविदो की दृष्टि में धूसर चित्रित मदपात्र से ज्यादा महत्वपूर्ण है। यह सीमित प्रदेश म व्याप्त न होकर विस्तृत क्षेत्र से प्राप्त होता है। अमलानन्द घोष

क्र स	जिला	पुरास्थल	सांस्कृतिक विवरण	सन्दर्भ
91	डूगरपुर	आमझरा	गुप्तोत्तर	राजस्थान शासन के पुरातत्व एव सग्रहालय विभाग द्वारा[1]
92	उदयपुर	छोटी सादडी	गु	आई ए आर, 1953 54, पृ 13
93	श्रीगगानगर	बडोपल	शु कु, गु	शर्मा, दशरथ (सपा), पूर्वोक्त
94	,,	मुण्डा	?, गु	वही
95	,,	पीर सुल्तान के ढेरी	?	रिसचर, पूर्वोक्त
96	,,	तारखाने वाला डेरा	धू चि, शु, कु	वही
97	,,	चक-84	धू चि	वही
98	,,	पीलीबगा	?	वही
99	सीकर	रानोली	शु, कु, गुप्तोत्तर	वही
100	झुंझुनू	नरहर	शु, कु, गुप्तोत्तर	वही

1 प्रकाशित एक साइक्लोस्टाइल कापी के आधार पर।

अध्याय–4

प्राक् शुग स्तर

पुरातत्व की दृष्टि से भारतीय वस्तु राजस्थान मे भी ऐतिहासिक काल का प्रथम चरण उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा के *प्रारम्भ और उसकी समाप्ति के बीच स्वीकार किया जाता है।* इस पात्र परम्परा की शुरुआत प्राय छठी शताब्दी ई० पू० या इसके किंचित पूर्व की है और अन्त प्राय दूसरी शताब्दी ई० पू० का। इस तथ्य की पुष्टि स्तरी करण और कार्बन–14 तिथि के आधार पर भी होता है। यह सयोग की बात है कि प्राय इसी काल मे (184 ई० पू०) मौर्य राजवश को समाप्त कर शुग शासनारूढ होते हैं। इसी कारण प्रस्तुत अध्याय का नामकरण हमने 'प्राक् शुग स्तर" किया है।

उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा पुरातात्विक इतिहास मे बहुचर्चित ही नही अपितु विशिष्ट भी है। जैसा कि नाम से ही विदित है, इस कोटि मृद्‌पात्र बहुधा काले रग के हैं तथा इनके बाहरी व भीतरी धरातल पर एक प्रकार का मार्जन (पालिश) प्रतीत होता है। प्रारम्भ में ये पात्र उत्तर भारत से ही प्राप्त हुये अस्तु इनका नाम "उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित मृद्‌पात्र पड गया।

उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित मृद्‌पात्र पुराविदो की दृष्टि में धूसर चित्रित मृदपात्र से ज्यादा महत्वपूर्ण हैं। यह सीमित प्रदेश में व्याप्त न होकर विस्तृत क्षेत्र से प्राप्त होता है। अमलानन्द घोष

ने सवप्रथम ग्रहिच्छत्रा के उत्खनन के ग्राधार पर इस पात्र परम्परा का नामकरण किया है।[1]

उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित मृदपात्रो के सन्दभ म यह कथन सत्य है कि ये न तो केवल उत्तर भारतीय है, न ही मात्र कृष्ण वर्णीय हैं और न ही इन पर किसी प्रकार का माजन है। जहा तक उत्तरी भारत मे पाये जाने का प्रश्न है, यह उल्लेखनीय है कि ग्राधुनिकतम ग्रन्वेषणो के सन्दभ मे *यह स्पष्ट हो चुका है कि इस श्रेणी के मदपात्र* उत्तर भार की भौगोलिक सीमाग्रो के बाहर भी उपलब्ध हुए हैं यथा उत्तर-पश्चिम भारत मे तक्षशिला से, दक्षिण म ग्रमरावती स। पूरब से पश्चिम की ग्रोर इसकी बहुलता क्रमश कम होती जाती है। दूसरी बात काले रग की है। इस सम्बन्ध मे यह कहा जा सकता है कि मुख्य रूप से ये कोयले जसे काले हैं परन्तु इस कोटि के कुछ पात्र *रजत स्वर्णिम, गुलाबी, लोहे-नील (Steel blue) तथा भूरे रगो मे भी* उपलब्ध होते हैं। इस स्थल पर यह उल्लेखनीय है कि कोयले जसे काले मदपात्रो के ग्रतिरिक्त ग्रन्य रग के कृष्ण मार्जित ग्रपेक्षया दुलभ है।[2] कतिपय उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित मृद्‌पात्रो म चित्रकारी तथा क व द्वारा साज सज्जा भी की गई है। सन 1971-72 मे दिल्ली मे इस पात्र परम्परा के नामकरण के प्रश्न पर एक परिचचा हुई थी।[3] लम्बे वाद-विवाद के पश्चात पुराविद इस निष्कष पर पहुचे कि उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित मदपात्र नाम तब तक प्रयोग करते रहना उचित होगा जब तक कि ग्रन्य उचित नाम सामने नही ग्राता।

उत्तर भारत के कृष्ण मार्जित मदपात्र मुख्य रूप से उत्तर भारत ही मिले है। इस पात्र परम्परा के विशिष्ट स्थलो मे (जहा ये

घोष ए, एव पाणिग्रही के सी 'पाटरी ग्राफ ग्रहिच्छत्रा" ए ई ग्रक। (1946), प 37-59।

निगम, जे एस, 'नादन ब्लक पालिश्ड वयर", माग जिल्द 14 ग्रक 3 (जून 1961), प 36।

प्रोसीडिंग्स ग्राफ दी समिनार ग्रान ग्रा स पी एण्ड एन बी पी पुरातत्व ग्रक 5, (1971-72)।

बहुतायत से प्राप्त हुए है।) कोशाम्बी, झूसी, राजघाट, सोनपुर, चिरोद, बक्सर, वैशाली, राजगिर, सौहगोरा, हस्तिनापुर अहिच्छत्रा, अतरजी खेडा, इन्द्रप्रस्थ तथा काम्पिलम मुख्य हैं। इन स्थानो से इस पात्र का मिलना इस बात का सकेत है कि यह पात्र गगा की घाटी मे ही उदभूत हुआ और पीछे लोकप्रिय होने के कारण इसका प्रसार होता गया। सीमावर्ती स्थलो मे इसकी उपस्थिति पश्चिम मे चारसदा, तक्षशिला उत्तर मे नेपाल की तराई, कठियावाड मे प्रभासपाटन, पूव म चाकेनगढ तथा दक्षिण मे चेब्रोलु[1] मे दिखाई देती है।

ये पात्र प्याली, तश्तरो, ढक्कन तथा टोटीदार पात्रो के रूप मे मिलते हैं।[2] ये पात्र बहुत पतले हैं और इतने अधिक पकाये गये हैं कि गिरने पर धातु के टुकडो के समान खनकते हैं।[3] मूलत ये पात्र सादे और अचित्रित हैं परन्तु कुछ स्थानो से ऐसे भी पात्र मिले है जिन पर चाकलेटी, लाल या पीले रग के चित्र बने हैं। इन चित्रो मे एक केन्द्रीय वृत, बिन्दुओ से बने चक्र और ज्यामितिक आकार हैं। इन पात्रो की बनावट और कई पकाने की पद्धति इस बात की परिचायक है कि इसके निर्माता बहुत ही कुशल कुम्लकार थे। निश्चय ही तब तक मिट्टी के पात्र बनाने की कला बहुत उन्नत हो चुकी थी। इस पात्र परम्परा के सन्दभ मे उल्लेखनीय है कि अब तक प्राप्त काले व लाल रग की पात्र परम्परा व धूसर चित्रित मद्पात्र के साथ चाहे वह किसी भी स्थल या स्तर से प्राप्त हुए हो दूसरे प्रकार की भौतिक सामग्री अधिक नही मिलो जबकि उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित परम्परा के साथ अहिच्छत्रा, राजघाट, श्रावस्ती, उज्जन तथा विराटनगर से बहुत सी सामग्री मिली है। इस सामग्री मे पकी ईंटो से बने भवनो

---

1 आई ए आर, 1960–61, पृ 1।

2 देखिय, माग, जिल्द 14, अक 3 प 8, पुरातत्व, अक 5।

3 उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित मन्पात्रा की तकनीक के लिय देखिय, पोटरीज इन ऐंशियन्ट इण्डिया, पृ 188–92, (मपा) बी पी सिन्हा, ज एम एम यू बी, जिल्द 11, अक, आई ए आर 1956–57, प 56–57, वही 1919–60, प 120–121, करेन्ट साईंस, दिसम्बर 20, 1966, अक 24, प 632।

के अवशेष, लोह उपकरण, मूर्तिया, तांबे और चादी के अभिलेख रहित आहत सिक्के, तांबे की मूर्तिया व पत्थर की मूर्तिया मिली हैं। यह सामग्री उत्तर भारत के कृष्ण मार्जित पात्र के प्रयोगकर्ता के परिवेश पर पर्याप्त प्रकाश डालती है। इसके निर्माता पक्के भवनो मे रहते थे, जिसके चारो ओर सफाई का प्रबन्ध था। वे लोहे और अन्य धातुओ का प्रयोग कर रहे थे। तांबे और चादी के सिक्के इस बात की ओर सकेत करते हैं कि तत्कालीन युग मे व्यापार प्रणाली का हो चुका था। मृण्मूर्तिया, मनके, वलय आदि उनकी शृंगारिक विकास अभिरुचि और कला के परिचायक है। वस्तुत यह पात्र परम्परा ऐतिहासिक है। यह वह युग था जब दूसरी नगर क्रांति हुई। काल की दृष्टि से ये पात्र सातवी–छठी शताब्दी ई पू से लेकर द्वितीय श० ई० पू० तक मिलते हैं अर्थात् बुद्ध युग से लेकर द्वितीय शताब्दी ई० तक इस पात्र परम्परा का प्रयोग होता रहा।

उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित मदपात्र अपने समय के डीलक्स या उच्च श्रेणी के पात्र थे। यदि हम उत्तर भारत के कृष्ण मार्जित पात्र के साथ प्राप्त होने वाले अन्य मदपात्रो की तुलना करें तो इनका उच्च स्तर स्वय ही स्पष्ट हो जाता है। यह पात्र परम्परा वास्तव मे दुलभ विलासिता रही होगी और निर्धन व्यक्ति इसका प्रयोग न कर पाते रहे होगे।

कभी कभी तो इन मदपात्रो के ऐसे उदाहरण भी मिले हैं जो तांबे के तार द्वारा जोडे गये है। विराटनगर के उत्खनन से ऐसे ही मदपात्र उपलब्ध हुए हैं जो राजकीय सग्रहालय आमेर मे सुरक्षित है। विराटनगर से प्राप्त इस कोटि के मद्पात्रो की तुलना रोपड (हरियाणा), उज्जैन (मध्यप्रदेश) से प्राप्त मद्पात्रो से की जा सकती है जो तांबे के तार से जोडे गये हैं। पात्रो का तांबे के तार से जोडा जाना इस तथ्य की ओर सकेत करता है कि ये पात्र मूल्यवान थे और पात्रो के टूट जाने पर नये पात्र क्रय करने की अपेक्षा उनकी मरम्मत करना अधिक सुविधा जनक था। ऐसा प्रतीत होता है कि उत्तर भारत के कृष्ण मार्जित मृदपात्रो की उपलब्धि अत्यधिक सीमित थी अथवा इनका उत्पादन सीमित मात्रा मे होता था। इन पात्रो की दुलभता को दृष्टि मे रखते हुए कतिपय पुराविदो ने यह शका प्रगट की थी कि

इनका उत्पादन जरूर भारत मे होता था परन्तु तकनीक पश्चिम से आयातित थी। उक्त धारणा का आधार उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित पात्र एव यूनान मे पाये जाने वाले मृद्पात्रो का समानधर्मा होना था। परन्तु तार्किक पृष्ठभूमि पर यह सिद्धान्त स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि यूनान और एरिटाउन मे मिलने वाले पात्र उत्तरी भारत के कृष्ण मार्जित मदपात्र के जन्म के बाद के हैं। यूनानी कृष्ण पात्रो की तिथि दूसरी शताब्दी ई० पू० और एरिटाउन मे मिलते वाले प्रमायुक्त वाले पात्रो की तिथि तीसरी शताब्दी ई० पू० से तीसरी सदी ई० मानी गयी है। चूंकि पात्र का उद्भव भारत मे पहले ही हो चुका था अत तकनीक का आयात बाहर से नही हुआ।

राजस्थान के अनेक प्राचीन स्थलो से उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित मदपात्र मिले हैं जिनमे कई स्थानो का पुरातात्विक उत्खनन भी हो चुका है। आगे हम राजस्थान मे उत्खनित स्थलो के कृष्ण मार्जित पात्र स्तरो की सस्कृति का विवचन करेंगे।

विराट नगर (बेराठ)

इस प्राचीन नगर का उत्खनन दो बार किया गया। राजस्थान मे उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित मृद्पात्र परम्परा वाली सभ्यता का प्रतिनिधित्व करने वाला सबसे महत्वपूर्ण प्राचीन स्थल विराटनगर है। यहा के उत्खनन से राजस्थान मे सवप्रथम उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित मृद्पात्र का बोध हुआ था। इस स्थान का सबप्रथम विधिवत उत्खनन तत्कालीन जयपुर राज्य के पुरातत्व विभाग के निदेशक रायबहादुर साहनी[1] ने सन् 1936-38 मे किया। यह उत्खनन लम्बवत किया गया था। विराटनगर का भारतीय इतिहास मे महत्वपूर्ण स्थान रहा है। सस्कृत साहित्य और विशेषकर महाभारत मे इस स्थान का उल्लेख कई बार हुआ है। सबसे महत्वपूर्ण साक्ष्य जिसने साहनी को उत्खनन कराने की प्रेरणा दी वह था मौर्य सम्राट अशोक का शिलालेख जो विराट नगर से उपलब्ध हो चुका था। ध्यान देने योग्य तथ्य यह

---

1 आर्कियोलोजिकल रिमेन्स एण्ड एक्सकेवशन एट बैराठ, जयपुर (1936-38)।

उल्लेख नही किया गया हालाकि अनेक आदय कुम्भकारो का उल्लेख जातक कथाओं मे है। इस स्थल पर यह भी उल्लेनीय है कि बराठ घाटी के अतिनिकट जोधपुरा नामक प्राचीन स्थल से उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित मृदपात्र अति अल्प सख्या मे मिलते हैं। इस स्थल का सम्बन्ध बौद्ध धम से नही जोडा जा सका है।

उत्तर भारत के कृष्ण मार्जित मृदपात्रो के युग का एक प्रमुख लक्षण यह है कि इस समय भारतवष लोह युग मे पूण रूप से प्रवेश कर चुका था। लोह उपकरणो के विकास के कारण ही भारतीय सम्यता और सस्कृति एक ऐसे धरातल पर आकर खडी हो गई थी जो अपने पूववर्ती युगो की अपेक्षा अधिक सम्पन्न थी क्योकि लोह के बन विकसित कृषि उपकरणो ने देश को धन्य धान्य से परिपूण कर दिया ✓था और इसी धन्य धान्य की परिपूणता ने मूर्तिकला एव स्थापत्य कला के विकास को माग दिया। लौह उपकरणो मे युद्ध, शिकार एव कृषि से सम्बन्धित सभी उपकरण प्रचुर सख्या मे उपलब्ध होते ह।

विराटनगर से उपरोक्त मदपात्रो के साथ मौय युग की प्रचुर सामग्री जिनमे विभिन्न प्रकार की मृणमय मूर्तिया विशेषकर मातृकायें हैं, उपलब्ध हुई हैं। मौय काल के विशेष आभा वाले पत्थर भी उपलब्ध हुए हैं जो कि सभवत स्तूप के छत्र के भाग थे। यहा से धीया पत्थर की मजूषायें भी मिली हैं जिनमे शृगार सबधी सामग्री या धर्माचार्यों के अवशेष रखे जाते थे।

प्राकशुग स्तर से कोई सिक्का नही प्राप्त हुआ है परन्तु इसके तुरन्त बाद के स्तरो से आहत सिक्के प्राप्त हुए हैं जो प्राकशुग स्तरीय भी हो सकते हैं।

नालन्दा के मठ की भांति मुस्लिम आक्रमणकारियों का यह काम नहीं हो सकता क्योंकि इसका समय बहुत पीछे का है। सम्भवत मिहिरकुल के आक्रमण के फलस्वरूप लगभग 510–540 ईस्वी में इन्हें तोड़ा गया।

वृत्ताकार उपासना स्थल

विराट नगर के उत्खनन से जो पुरावशेष मिले हैं उनमे सबसे महत्वपूर्ण वृत्ताकार उपासना स्थल है। यह भारत मे अद्यावधि उपलब्ध एक प्राचीनतम देवभवन है। यह हीनयान सम्प्रदाय का मन्दिर था और यह योजना मे दोहरा वृत्ताकार है तथा प्रदक्षिणा पथ द्वारा पृथक होता है। यह उपासना स्थल महाराष्ट्र की जुन्नार गुफाओं से अनेक अर्थों म सम्य रखता है। भारतीय स्थापत्य मे काष्ठ एवं ईंट के उपयोग के प्राचीनतम साक्ष्य भी मिले हैं।

यह मन्दिर बहुत ही रोचक तरीके से निर्मित है। प्राप्त भग्नावशेषों म यह सबसे महत्वपूर्ण ह। विराटनगर से प्राप्त अशोक के अभिलेखों की भांति यह मन्दिर भी अशोक ने बनवाया था।[1] एक भयंकर अग्निकाड मे यह मन्दिर नष्ट हो गया था।

रायबहादुर दयाराम साहनी से पूर्व कनिंघम ने भी परीक्षण के तौर पर बराठ मे दो खाइयां खुदवायी थी। साहनी के उत्खनन मे कनिंघम द्वारा उत्खनित एक खाई के अवशेष मिले जिसके कारण वृत्ताकार मंदिर का उत्तरी पूर्वी भाग नष्ट हो गया था। कनिंघम की दूसरी खाई इस वृत्ताकार भवन के पास मे थी। साहनी का उत्खनन कार्य उस वक्त कुछ समय के लिये अवरुद्ध हो गया जब उन्होंने विशाल एवं गोल पत्थरों की पूर्व से पश्चिम की ओर फैली हुई एक दीवार के अवशेष देखे। इस दीवार के निर्माण का उद्देश्य अस्पष्ट है। लेकिन यह दीवार भी उसी काल मे निर्मित हो गई थी। मूल ढांचे का वह भाग जो खुदाई म प्रथम बार सामने आया, दक्षिणी पश्चिमी दिशा म एक कोना

---

1 साहनी, डी आर. आर्कियोलाजिकल रिमेन्स एण्ट एक्सकेवेशन एट बराठ।

था और इसके अतिरिक्त हिस्से मे एक गोलाकार दीवार थी। इस दीवार से कुछ फीट अन्दर की ओर इसी प्रकार की एक अन्य दीवार के अवशेष थे। इस भवन के सारे ढाँचे को बडी सावधानी से उत्खनित किया गया और इसी दौरान एक वृत्ताकार भवन के अवशेष मिले जो 27 फीट 2 इच के घेरे मे था और उसके चारो ओर एक वृत्ताकार मार्ग बना हुआ था यह मार्ग 7' 3" चौडा था और इसके चारो ओर भली प्रकार बनी हुई वृत्ताकार दीवार थी। यह वृत्ताकार मार्ग मजबूत ईंटो की मोटी तह से युक्त था और उस पर चूने का पलस्तर किया हुआ था। इस फर्श को देखने मे ऐसा आभास होता है कि इसे 2 या 3 बार पुन निर्मित किया गया होगा। मध्य भाग के ढाचे की भी खुदाई करवाई गई लेकिन यहाँ किसी भी प्रकार के अवशेष नही मिले। वृत्ताकार दीवार के निम्नतम सतह के कई भाग यह सकेत करते हैं कि इसका अतिरिक्त भाग ईंटो के फर्श से युक्त था। इन ईंटों की माप 24"×5" या 18"×3" थी। इस भवन का निकास द्वार पूर्व दिशा म है और इस निकास मार्ग के निकट 2 फीट चौडा बरामदा है। इस बरामदे मे लकडी के स्तम्भ बने हुए थे। इस दरवाजे के सामने मध्य भाग के धार्मिक भवन मे एक चौडे निकास द्वार का पता चलता है। 8' 7' फीट चौडा है। यह द्वार बाहरी वृत्ताकार दीवार मे बना हुआ है। उस दीवार पर एक लकडी का दरवाजा था क्योकि दरवाजे के नीचे के भाग मे लकडी के अवशेष मिलते हैं। यह लकडी का दरवाजा लोहे की कीलो से दीवार मे जडा गया था। क्योकि 9 इच लम्बी व 1 इच मोटी लोहे की कीलें दरवाजे के ऊपरी भाग पर लगी हुई थी। इस दरवाजे के पास मे पिरोये हुए मिट्टी के मनके बिखरे हुए थे। इन मनको का प्रयोग सभवत दरवाजो को सजाने के लिये किया जाता होगा जैसे कि आधुनिक काल के मदिरो के दरवाजो को भी सजाया जाता है। मदिर के अन्दर की दीवार पर वैकल्पिक रूप से ईंटें लगी हुई थी जो पटकोणीय स्तम्भों पर टिकी हुई थी। इन स्तम्भो की सख्या 26 है। इनमे वे दो स्तम्भ भी शामिल हैं जो श्री साहनी के उत्खनन के पूर्व खोदी गई एक खाई से नष्ट हो गये थे।

अशोक के स्तम्भो मे प्रयुक्त ईंटो मे जो पलस्तर किया गया था उसी प्रकार का पलस्तर इन दीवारो पर भी है और चूंकि यह भवन एक

अग्निकांड मे नष्ट हो गया था अत इस पलस्तर के टुकडे चारो ओर फैले हुए हैं। कालांतर मे यह मदिर एक चतुभुज दीवार से घेर दिया गया था। इस मदिर का ऊपरी हिस्सा भी उसी प्रकार बना होगा जिस प्रकार कि निचला भाग है। यह सारा ढाचा लकडी के 26 स्तम्भो पर टिका हुआ है। इस वृत्ताकार मदिर के चारो ओर के रास्ते (परिक्रमा) म के दोनो ओर की दीवारें ईंटो की बनी हैं। इन दीवारो के आतरिक भाग पर काष्ठ कला की अनुपम कृतियाँ हैं।

पश्चिमी तथा पूर्वी भारत मे पाये जाने वाले गुहा मदिरो मे यह मदिर सबसे पुराना है। इस मदिर के पास ही भिक्षुओ के रहने के विहार बने हुए हैं। मदिर के बाहरी दीवारो पर अशोक कालीन ब्राह्मी लिपि मे बौद्ध धम ग्रन्थो के कुछ वाक्य उद्धत थे जो सभवत बौद्ध भिक्षुओ को धर्मोपदेश देने के लिये अकित करवाये गये थे। यह प्रथा आधुनिक मदिरो मे भी देखने को मिलती है।

विराट नगर का उत्खनन दूसरी बार नीलरत्न बैनर्जी व कलाशनाथ[1] दीक्षित द्वारा पुरातत्व की आधुनिक तकनीकों के आधार पर हुआ जिसमे प्रथम निवास काल मे धूसर चित्रित मृद्पात्र, द्वितीय निवास काल से उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित मृदपात्र तथा तृतीय निवास काल से कृष्ण युग की सभ्यता के अवशेष प्राप्त हुये। उत्खनन का विस्तृत प्रतिवेदन अभी भी अप्रकाशित है।

जोधपुरा

विराट नगर के ही समीप साबी नदी के तट पर जोधपुरा नामक अन्य प्राचीन स्थल भी विशेष रूप मे उल्लेखनीय है जो प्रारम्भिक ऐतिहासिक युग के राजस्थान में हो रही गतिविधियो के विषय म अनेक सूचनायें देता है।

इस प्राचीन स्थल का उत्खनन राजस्थान शासन के पुरातत्व एव सग्रहालय विभाग के निदेशक रत्नचन्द्र अग्रवाल के निर्देशन म विजय

---

1 आई ए आर 1962–63, पृ 31।

कुमार द्वारा सम्पन्न हुआ।[1] यहां के उत्खनन ने यह सिद्ध कर दिया कि श, ई पू के स्तरों से लोहे की सामग्री यथा बाण, कील, कांटे, खूट आदि प्रचुर सख्या मे उपलब्ध होते हैं। जोधपुरा मे लोह सामग्री का निर्माण प्राचीन स्थल पर ही होता था क्योंकि जोधपुरा के अचल म "मैंगनीयस हेमाटाइट" के भण्डार उपलब्ध होते हैं जो कि लोह निर्माण के लिये एक खनिज धातु है। जोधपुरा के सलेटी रग के चित्रित माप दण्ड करते हैं, से लोहा गलाने की भट्टिया मिली है। इन भट्टियो द्वारा इस प्राचीन स्थल पर ही लोहा गलाने का काय किया जाता था तथा यही पर लोह सामग्री का निर्माण भी किया जाता था।

जोधपुरा का चतुथ निवास काल मौय युग का प्रतिनिधित्व करता है जिससे कि हमे मौय युग म प्रयोग होन वाले साधारण लाल रग के मृदभाण्ड मिलते है जिन पर चित्रो द्वारा साज सज्जा की गई है एव कटाव तथा चिपकवा विधि से अलकरण किया गया है। ज्ञातव्य है कि यहां से उत्तरी कृष्ण मार्जित मृदपात्र परम्परा का केवल एक ही नमूना मिला है जो किसी प्रकार के सम्पर्क द्वारा आयातित किया गया होगा। उत्तर भारत का कृष्ण मार्जित मृदपात्र यहा स्थानीय मृत्तिका उद्योग म नही था। मौयकालीन स्तरो से हमे मकानो के अवशेष भी मिलते हैं जिनमे पकायी गयी ईटो का प्रयाग किया गया है। मौयकालीन स्तरा से मृण्मय मूर्तिया, सिक्के व मोहरें भी मिलती हैं।

आहाड (जिला उदयपुर)

राजस्थान शासन के पुरातत्व एव सग्रहालय विभाग द्वारा सन 1952 मे परीक्षण के तौर पर उत्खनन किया गया।[2] आर सी अग्रवाल के निर्देशन मे प्रथम, द्वितीय एव ततीय काल की सास्कृतिक गतिविधियो का देखन के लिये पुन उत्खनन करवाया गया लेकिन इस वर्ष भी जिस प्रस्तावित स्थल पर उत्खनन करवाया गया वहा काल खण्ड तृतीय के कोई अवशेष नही मिले।[3]

---

1 विजयकुमार, 'एक्सकवेशन एट जोधपुरा", जिला जयपुर (समरी पेपर), राजस्थान हिस्ट्री काग्रेस पाली सेशन, 1973, त 16–18।

2 आई ए आर, 1954–55, प 14–15।

3 वही, 1955–56 प 14।

स्नातकोत्तर एव अनुसधान केन्द्र, दक्कन महाविद्यालय पूना, राजस्थान शासन के पुरातत्व एव सग्रहालय विभाग तथा मेलबोन विश्वविद्यालय आस्ट्रेलिया तीनो के सयुक्त तत्वाधान मे आहाड के एक टीले का उत्खनन करवाया गया। इस स्थल ने द्वितीय काल खण्ड को उत्तर भारत के कृष्ण मार्जित मृदपात्र परम्परा की सस्कृति का बताया गया। इस स्तर से लोहे के उपकरण तथा पात्र परम्परा मे नवीनता तथा लेखन शैली के ज्ञान के भी प्रमाण मिले।

यह द्वितीय काल खण्ड पुन तीन खण्डो मे विभाजित कर दिया गया। काल खण्ड "अ", काल खण्ड "ब' और काल खण्ड "स"। काल खण्ड "अ' के स्तर पर उत्तर भारत के कृष्ण मार्जित मृदपात्र, लोहे के खोखले बाणाग्र, अपरिष्कृत लाल मिट्टी तथा हल्के लाल रग सादे काले व लाल रग तथा चित्रित काले व लाल रग के मृदपात्र मिले जो पूर्वगामी सस्कृतियो से कुछ मिलते जुलते थे।[1]

इस प्रकार आहाड मे उत्तर भारत के कृष्ण मार्जित मृदपात्रो की उपलब्धि कुछ सीमा तक भारत मे उत्तर भारत के कृष्ण मार्जित मृदपात्रो की पश्चिमी सीमा का निर्धारण करती है। लेकिन आहाड मे 'यह पात्र परम्परा व्यापारिक सम्बन्धो के कारण ही रुकना सभव हुई है। क्यों यहाँ की मृत्य कला से इस पात्र परम्परा के निर्माण के कोई साक्ष्य नही मिलते अत आहाड मे यह पात्र आयातित ही थे।

नोह (जिला भरतपुर)

राजस्थान सरकार के पुरातत्व एव सग्रहालय विभाग द्वारा आर सी अग्रवाल के निर्देशन मे नोह मे उत्खनन करवाया गया। धूसर रग के चित्रित मृदभाण्ड सस्कृति के अवशेष देखने के लिए अक्टूबर के अन्त म 1969 मे पुरातत्व विभाग ने नोह के पश्चिमी टीले पर प्रयोग के तौर पर उत्खनन करवाये।

इस उत्खनन काल मे तृतीय कालखण्ड मे सलेटी रग के चित्रित मृद्भाण्ड सस्कृति का मृत्कला का ही उद्योग था लेकिन इस समय यह

---

1 वही, 1961-62, प 50।

अपरिष्कृत अवस्था मे था । यह कालखण्ड हस्तिनापुर के तीसरे कालखण्ड के समान ही है । यह सही है कि इस स्तर से उत्तर भारत के कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा के मृदपात्र नही मिलते लेकिन इस स्तर पर ही उत्तर भारत के कृष्ण मार्जित परम्परा के विशिष्ट प्रकार के पात्रों के टुकडे मिलते हैं जिनमे किसी किसी टुकडे पर लाल रग का माजन है जैसा कि वी के सिन्हा को वैशाली नगर से प्राप्त उत्तर भारत के कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा के टुकडे मिले । [1]

टीले के पश्चिमी भाग पर उत्खनन के दौरान 5 स्तर देखे गये जिसमे से चौथा स्तर उत्तर भारत के कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा वाली सस्कृति वाला था और इस सस्कृति के अन्य पुरावशेष जिनमे अलिखित ताँबे के ढले हुए सिक्के, मिट्टी की मनुष्य तथा जानवरो की मूर्तिया, पत्थर व मिट्टी के मनके, ताँबे की चूडिया व वलय तथा चक्की व चूल्हे भी मिले । [2]

राजस्थान शासन के पुरातत्व एव सग्रहालय विभाग ने सन 1966 67 मे पुन उत्खनन करवाया । [3] इस बार के उत्खनन का मुख्य उद्देश्य सलेटी रग के चित्रित मदभाण्ड परम्परा के बाद की सस्कृति मुख्य रूप से उत्तर भारत के कृष्ण मार्जित मदपात्र सस्कृति की स्थिति के बारे मे निर्धारण करना था । अत टील के दक्षिणी ढलान की ओर एक खाई जिसकी की माप 7 5 मीटर थी, खोदी गई ।

इस बार के उत्खनन मे दो स्पष्ट कालो की स्थिति का पता चला । जिसमे कालखण्ड तीन, चार व पाच मे क्रमश धूसर चित्रित मृदपात्र से सम्बन्धित तथा कृष्ण मार्जित मृदपात्र सस्कृतियो के अवशेष मिले जुले हैं ।

कालखण्ड 5 को प्रारम्भिक छठी श० ई० पू० का आका गया । जबकि कालखण्ड पाँच को दूसरी श० ई० पू० व तीसरी श० ई० पू० के अन्तिम काल का आका गया ।

---

1 आई ए आर 1963-64, प 29
2 आई ए आर 1964-65, प 35
3 आई ए आर 1966-67, प 30-31

उत्तर भारत के कृष्ण मार्जित मृदपात्र परम्परा की सस्कृति व उसम पायी जाने वाली अन्य वस्तुओं के आधार पर कालखण्ड चार को उत्तर भारत ने कृष्ण मार्जित मृदपात्र परम्परा सस्कृति का बनाया है।

मोह से प्राप्त इस परम्परा के मृदपात्रो के टुकडो पर असाधारण प्रकार माजन है अर्थात् वो काफी चमकीले हैं तथा धातु की तरह खनकते थे, इनका रग कोयले जसा काला व भूरे काल रग का था। उन्हे लोहे का ज्ञान था। यहा से प्राप्त अन्य पुरावशेषो मे ढले हुए ताबे के सिक्के, ताबे की वस्तुए, मिट्टी के मानव व जानवरो की मूर्तिया मिली जिनमे एक हाथी की मूर्ति विशेष महत्व की थी, इस हाथी क शरीर पर पूरे घाव के निशान है जो इस ओर इगित करता है कि आखेट के समय इसे मारा गया था। इस काल मे तीन आवासीय भवनो के खण्डर भी मिले जिनमें काम मे ली गई ईंटो की माप 40×20×6 से मी थी तथा ये ईंटें मिट्टी की बनाई हुई थी।

सन् 1968-69 मे[1] किये गये उत्खनन मे कालखण्ड चार से उत्तर भारत के कृष्ण मार्जित मृद्पात्र सस्कृति के कुछ पुरावशेष जिनमे मिट्टी की ईंटा को दीवार, पकाई हुई ईंटो की नालिया तथा कुछ चूल्हे प्रकाश मे आये।

सन् 1970-71 के उत्खनन[2] के दौरान तीसरे कालखण्ड से सलेटी रग के चित्रित मृद्पात्र व उत्तर भारत के कृष्ण मार्जित मृदपात्रो क मिले-जुले टुकडे मिले। और इसी के साथ अन्य पुरावशेषा जैसे मनके, लाह व ताब क औजार आदि मिले। लेकिन कालखण्ड चतुथ मे स्पष्ट रूप से केवल उत्तर भारत के कृष्ण मार्जित मृद्पात्र ही मिले। इस स्तर से अन्य पुरावशेषा मे मिट्टी के मनके, ताबे के सिक्के, मिट्टी की आदमी व जानवरा की मूर्तिया जिन पर कई चिन्ह आहत किये हुए थे, ताबे व लाहे के औजार, ब्राह्मी लिपि मे प्र्वमितस अवित ठप्पा भी मिला।

---

1 वहा, 1968-69, पृ 26

2 वही, 1970-71 पृ 32

सन 1971-72 मे किये गये उत्खनन [1] के दौरान कालखण्ड चतुथ से उत्तर भारत के कृष्ण माजित सस्कृति के मृद्पात्र तथा अन्य पुरावशेष तथा—मिट्टी के मनके, शीशा तथा हाथी दात व पत्थर के मनके, सेलखडी की मजुषा तथा मिट्टी के मनुष्य व जानवरो की मूतिया मिली।

नगर

नगर [2] अथवा कार्कोट नगर से प्राप्त पुरावशेष यथा लोहे के उपकरण, मद्भाण्ड, मिट्टी के ठप्पे, काफी मात्रा मे चीनी मिट्टी के जानवरो तथा मानव की मूतिया, अभिलेख तथा सिक्के दूसरी शताब्दी इ पू या उससे भी पहले को मालवो के विकसित केन्द्र बतात हैं।

उपरोक्त प्राचीन स्थलो के अतिरिक्त राजस्थान के अनेक अन्य प्राचीन स्थलो से प्रारभिक ऐतिहासिक युग के पुरातात्विक अवशेष मिलते हैं जो उन स्थलो का महत्व दिग्दर्शित करत हैं।

राजस्थान सरकार के पुरातत्व एव सग्रहालय विभाग द्वारा किये गये उत्खनन से सर्वेक्षण के दौरान गादी [3] (जिला जयपुर) तथा चोसला [4] (जिला अजमेर) से उत्तर भारत के कृष्ण मार्जित मदपात्र मिले हैं।

अजमेर शहर से 7 मील पूव मे स्थित बडली के अभिलाख तथा भरतपुर से 4 मील उत्तरी पूव मे स्थित नोह से प्राप्त मोयकालीन 7 फीट यक्ष की ऊँची मूर्ति से अजमेर और भरतपुर का महत्व सिद्ध होता है।

लालसोट (जिला जयपुर) से दो स्तम्भ प्राप्त हुए हैं जा भारहुत मुतिकला को प्रदर्शित करते हैं।

---

1 आई ए आर 1971–72, प 42
2 शर्मा, दशरथ (सपा) राजस्थान यू दी एजेज, 1966
3 आई, ए आर, 1958–59
4 वही, 1958–59 प

आधुनिक चित्तौड जिले से 7 मील उत्तर मे स्थित, नगरी गाव है। यहा से अनेक पुरावशेष मौर्यकालीन प्राप्त हुये। इसे माध्यमिका भी कहा जाता है।

माध्यमिका से दूसरी श ई पू के तावे के सिक्के मिले जिन पर ब्राह्मी लिपि मे "मजिमकाम-सिबि-जनपदस्य" अकित है। जिससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ईसा के जन्म से दो शताब्दी पूर्व चित्तौड से लगी सीमा को सिबि जनपद कहा जाता था। महाभारत मे भी नकुल द्वारा वतधनस विजय के सम्बन्ध मे भी माध्यमिका का उल्लेख आया है। महाभाष्य मे भी भारतीय यूनानियो द्वारा माध्यमिका के घराव का उल्लेख आया है। अजमेर के निकट बडली से प्राप्त अभिलेख की चौथी पक्ति मे एक व्यक्ति को मभिमिका कहा गया है जो मध्यमिका का रहने वाला था।

दूसरी व तीसरी श ई पू नगरी से प्राप्त अभिलेख जिस पर कि बौद्ध धर्म के "करुण सिद्धान्त का उल्लेख है एव वही से प्राप्त कुछ स्तूप भी मिले है। ये दोनो ही साक्ष्य मेवाड मे तीसरी-दूसरी श ई पू मे बौद्ध धर्म के प्रभाव को बताते हैं।

अत यह सिद्ध हो जाता है कि माध्यमिका जो कि दूसरी श ई पू म सिबी लोगो की राजधानी थी, ने अपना महत्व अगली कई शताब्दियो तक बनाये रखा यद्यपि उनकी स्वतन्त्रता समाप्त हो गई थी। और वहां पर मुख्य रूप से बौद्ध धर्म से प्रभावित लोग रहते थे।

उपरोक्त उत्खनित स्थलो के अतिरिक्त सर्वेक्षण मे अनेक स्थलो के धरातल से उत्तर भारतीय कृष्ण माजित भद्पात्र के टुकडे प्राप्त हुए हैं। एसे स्थलो की सूची परिशिष्ट मे दी गई है।

अध्याय-5

शुग कुषाण स्तर

मौय सस्कृति के अवसान के बाद राजस्थान म जिस सस्कृति के पुष्पित पल्लवित होने के साक्ष्य मिलते हैं वह प्रमुख रूप से शुग एव कुषाण शासको के काल मे विकसित हुई। कतिपय अपरिहाय ऐतिहासिक कारणो से मौय सस्कृति अपने मौलिक रूप मे अधिक समय तक जीवित नही रह सकी। इसका प्रमुख कारण था मौय सम्राट अशोक द्वारा बौद्ध धम को राजधम के रूप मे अगीकार करना। बौद्ध धम का 'अहिंसा सिद्धान्त" मौय साम्राज्य एव सस्कृति के अल्प जीवन के लिये उत्तरदायी सिद्ध हुआ क्यो कि भारतीय सैनिक शक्ति के दुबल हो जाने के कारण कतिपय स्वदेशी तथा विदेशी शक्तियो को मौर्य साम्राज्य के लडखडाते साम्राज्य पर आक्रमण कर सत्ता हथियाने का मौका मिला। शुग और बाद मे कुषाणो ने इस अवसर का लाभ उठाया और शन शन भारतवष के केन्द्रीय सत्ता के रूप मे स्थान ग्रहण किया। भारत की ऐसी राजनीतिक स्थिति मे जब विदेशी शक्तिया ने अपने पर जमाये तब वे अपने साथ एक ऐसी सस्कृति लाये जो अनेक अर्थों मे भारत की पूववर्ती सस्कृतियो से भिन्न थी। भारतीय साहित्य मे जिन विदेशी जातियो का उल्लेख आता है उनमे सबसे प्रथम शक है। उसके बाद यवन और पहलवो का उल्लेख है। सस्कृत साहित्य म अनेक स्थलो पर शक यवन, पह्लव शब्द का प्रयोग मिलता है जिससे विदेशी जातियो का बोध होता है। भारत मे जितने भी विदेशी कबीले आये और यहा बस गये। उन

रूद्रसेन, सघादमन, दामसेन, वीरदायन, यशोदामन, विजयसेन, जमदाश्रसारी तृतीय, यशोदामन द्वितीय, रुद्रसन तृतीय आदि के सिक्के हैं। राजस्थान मे शको की जो घुसपैठ चल रही थी वह अर्जुनायनो की मदद से मालवो द्वारा अन्तत समाप्त कर दी गई।[1]

कनिष्क के राज्यारोहण के पश्चात राजस्थान के उत्तरी क्षेत्र म मुख्य विदेशी प्रभाव शायद कुषाणो का था। कनिष्क के शासन के 11वें वर्ष के सुईविहार अभिलेख के अनुसार बहावलपुर व उसके आस पास के क्षेत्र कनिष्क के अधिकार मे थे।[2] अथवा यह भी हो सकता है कि कुषाणो का प्रभाव इस क्षेत्र मे पहले ही पहुच गया हो। आरेल स्टान को सूरतगढ तथा हनुमानगढ के टीलो से कुछ सिक्के प्राप्त हुए है जिनसे पता चलता है कि कनिष्क के काल से पहले ही कुषाणो का प्रभाव पश्चिमी राजस्थान तक था। लेकिन मात्र कुछ सिक्को के मिलने से कुजुल कदफिस का प्रभाव स्वीकार नही किया जा सकता। सम्भवत ये सिक्के व्यापारिक सम्बन्धो के कारण यहा आये हो। पीसगन सांभर[3] व रगमहल[4] से भी कुषाणो क सिक्के मिले है। इस क्षेत्र की मृण्मय कला व अन्य कलाकृतियो के आधार पर कहा जा सकता है कि उत्तरी क्षेत्र मे कुषाणो का प्रभाव काफी अर्से तक रहा। लगभग दूसरी शताब्दी ई के पश्चात् इस कुषाण प्रभाव का अन्त यौधया और उनक सहयोगी जनपदीय गणतत्रों क हाथो हुआ।[5]

कुषाण काल

जिस प्रकार साहित्य समाज का दर्पण होता है उसी प्रकार कला मे समाज और साहित्य दोनो अशत प्रतिबिम्बित होते हैं। राजस्थान के

---

1 देखिए, पुरातत्व सग्रह, गणराज्यो का युग मरुभारती जिल्द 8, खण्ड 4, 5
2 सरकार, डी सी सलेक्ट इसक्रिप्शस, प 135
3 साहनी, दयाराम आर्कियोलोजिकल रिमस एण्ड एक्सकवेशन एट साभर जयपुर स्टेट 1936–38)
4 हनारीड एक्सकवेशन एट रगमहल, 1952–54
5 शर्मा, दशरथ (सपा) राजस्थान थ्रू दी एजेज, 1966, प 55

प्राचीन इतिहास मे यहा की जनता को अनेक विदेशी शक्तियो का सामना करना पडा । उन अनेक शक्तियो मे से कुषाणो का प्रभाव सबसे अधिक पडा । इस समय यहा के कलाकारो को अपनी जीविका के लिये विदेशियो का ही आश्रय ढूढना पडा होगा । इन्ही कारणो से कलाकार की छेनी मे कुषाण प्रभाव झलकने लगा । नवीन सस्कृति, शासक और परम्पराओ के साथ नवीन विचारो का प्रादुर्भाव हुआ जिसने एक नवीन शैली को जन्म दिया जो कुषाण कला अथवा मथुरा कला के नाम से प्रसिद्ध हुई । कुषाण सम्राट कनिष्क, ध्रुविष्क और वासुदेव का शासन काल कुषाण कला का सवप्रथम प्रादुर्भाव मथुरा मे हुआ । इसी कारण इस कला को मथुरा कला के नाम से अभिहित किया जाता है । उस समय इस शैली ने पर्याप्त समृद्धि और पूणता प्राप्त की । यद्यपि यहा की परम्परा का मूल भरहुत और साची की विशुद्ध भारतीय धारा है तथापि इसका अपना महत्व यह है कि यहा प्राचीन पृष्ठ भूमि पर नवीन विचारो से प्रेरित कलाकारो की छेनी ने एक ऐसी शैली को जन्म दिया जो आगे चलकर अपनी विशेषताओ के कारण भारतीय कला की एक स्वतन्त्र और महत्वपूर्ण शैली बन गई । इस कला के अकनीय विषयो का चुनाव भी पूण सहिष्णुता से किया । इस कला के पुजारियो ने विष्णु, शिव, दुर्गा, कुबेर, सूय आदि के साथ साथ बुद्ध तीथकारो की भी समान रूप से अचना की ।

कुषाण कला की विशेषतायें

इस कला की विशेषताये सक्षेप मे निम्नलिखित है:—

1 विविध रूपों मे मानव का सफल चित्रण ।
2 व्यक्ति विशेष की मूर्तिया का निमाण ।
3 मूर्तियो के अकन मे परिष्कार ।
4 प्राचीन और नवीन अभिप्रायो की मधुर मिलावट ।
5 बुद्ध, तीर्थंकर एव ब्राह्मण धम की बहुसख्यक मूर्तियो का निर्माण ।
6 गधार कला का प्रभाव ।

कुषाण काल मे मनुष्य और पशुओ के सम्मुख-चित्रण की पुरानी परम्परा छोड दी गई । साथ ही मानव शरीर के चित्रण की क्षमता भी

बढ गई। साभर के उत्खनन से अनेक स्त्री प्रतिमायें तथा देवी की प्रतिमायें प्राप्त हुई हैं। कुषाण काल की मूर्तियाँ शुग काल के समान चपटी न होकर गहराई के साथ उकेरी गई हैं।[1] प्रारम्भिक अवस्था की तुलना मे आकृतियो की ऊचाई बढ जाती है। इस काल की मूर्ति निर्माण की दूसरी विशेषता मूर्तिया का आगे और पीछे दोनो ओर से गढा जाना है। इस काल की बहुसख्यक मूर्तियाँ ऐसी ही हैं। कुषाणो के शासन काल मे उत्तर-पश्चिम भारत मे कला की एक नवीन शली चल पडी। यह भारतीय और यूनानी कला का एक मिश्रित रूप था, गधार प्रदेश मे इस कला का जन्म हुआ अत इसे गधार कला के नाम से जाना जाता है। साभर व रगमहल से अनेक मूर्तिया मिली जो गधार शली की है। गधार शली पर यूनानी कला का गहरा प्रभाव था।

ज्ञातव्य है कि कुषाण कला का प्रादुर्भाव मथुरा म हुआ था और उस समय मथुरा मे तीन सम्प्रदाय प्रमुख थे— जन, बौद्ध और ब्राह्मण। इनमें ब्राह्मण धम को छोडकर किसी को भी मूर्तिपूजा मान्य न थी, परतु मानव की आश्रय प्रवृत्ति के कारण शन शन इन सम्प्रदायो के आचाय स्वय ही उपास्य देव बन गय। साथ ही उपासना के प्रतीको का भी प्रादुर्भाव हुआ। ई पू द्वितीय शताब्दी से पहले ही बुद्ध के प्रतीक जैसे बोद्धिवक्ष, भिक्षापात्र तथा स्तूप आदि लोकप्रिय हो गये। जन समाज मे भी चैत्य स्तम्भ, चत्य वक्ष आदि प्रतीका को भी मान्यता मिल रही थी। कुषाण काल तक पहुचते पहुचते इन प्रतीको के स्थान पर प्रत्यक्ष मूर्ति की स्थापना की इच्छा बलवती होने लगी और थोड ही समय मे कुषाण कलाकारो ने तीथकर और बुद्ध मूर्तिया को जन्म दिया। इसी के साथ विष्णु, शिव, दुर्गा, कुबेर, सूय आदि ब्राह्मण धम की उपास्य मूर्तिया भी इसी समय बनी। भारतीय कला को कुषाण कला की यह सबसे बडी देन है। गुप्त और गुप्तोत्तर कला के विशाल प्रतिमा सग्रह का आधार कुषाण कला मे है।

आगे हम राजस्थान मे उत्खनित स्थलो के शुग व कुषाण काल की कला का विवेचन करेंगे।

---

1 जोशी, नीलकण्ठ पुरुषोत्तम मथुरा की मूर्तिकला, 1965 प 12

सांभर के विभिन्न स्तरों से कुषाण कालीन मृण्मय मूर्तियां मिली हैं तथा काल खण्ड चार से सप्रभूत मात्रा में कुषाण कालीन कला के उदाहरण मिलते हैं। इस काल खण्ड को कुषाण काल कहा जाता है। सांभर के उत्खनन से विभिन्न आवासीय भवनों से कुषाण काल के पुरावशेष मिलते हैं। मकान नं० 6 अन्य प्राप्त मकानों में सर्वाधिक सुरक्षित है। इस भवन से एक मिट्टी के घड़े के हत्थे पर एक यक्ष को कमल के फूल पर खड़ा हुआ दर्शाया गया है जिसके एक हाथ में कमल का कली है तथा दूसरे हाथ में एक माला है। यह कुषाण कला का विशिष्ट उदाहरण है।[1]

सतह से 10 फीट नीचे मकान नं० 9 से एक वर्गाकार मृदभाण्ड का टुकड़ा मिला है जिस पर पूरे खिले हुए कमल के फूल पर एक यक्ष दोनों तरफ पैर लटकाये बैठा है। यह कुषाण कला का एक विशिष्ट उदाहरण है। इसी प्रकार के चित्रण मथुरा से प्राप्त कुषाण काल के स्तम्भों पर भी मिलता है।[2] एक हाथ से बनाई हुई चिकनी मिट्टी की पुरुष प्रतिमा जो एक तिपाई पर बैठी है। मथुरा संग्रहालय के बोधिसत्व की प्रतिमा की भांति ही है। यह कुषाण कला की अनुपम कृति है।

सांभर को दूसरा काल प्राप्त पुरावशेषों के आधार पर प्रथम श ई पू का माना गया है। इस काल से एक मृण्मूर्ति मिली है जो काफी रोचक है। यह एक पुरुष की आकृति है जिसके एक हाथ में डमरू है तथा गले में सांपों की माला है, मानो शिव की प्रतिमा हो। साहनी ने इसे कुषाण कालीन मृण्मय कला कहा है।[3] एक अन्य नारी मूर्ति के एक हाथ में पात्र है तथा सिर पर विचित्र शिरस्त्राण है। इसे देवी का रूप बताया है।

---

1 साहनी दयाराम आर्कियालॉजिकल रिमेन्स एण्ड एक्सकवेशन एट सांभर जयपुर स्टेट 1936 38, पृ 28

2 वही, पृ 29

3 वही, पृ 29

इसी प्रकार विभिन्न स्तरो से शुग कुषाण काल की मण्मूर्तिया मिली हैं। साँच मे ढली हुई मूर्तिया जिन्हे समवत किसी दीवार म लगाने के उद्देश्य से बनाया गया था प्रभूत मात्रा मे मिलती हैं। उन सब मूर्तियो मे सबसे प्राचीन एक पक्ष का उध्व भाग है जिसे शुग काल का *(प्रथम शताब्दी ई पू) प्राका गया है।* इस काल की अन्य मूर्तिया म यक्ष मूर्तियाँ हैं जो नग्न अवस्था मे अपने सीने पर हाथ रखे हुये किसी जगले पर जो स्तम्भ पर टिका है, बठ हैं। इस प्रकार के उदाहरण मथुरा सग्रहालय मे भी देखने को मिलते हैं। इसी प्रकार सूय देवता या किसी राजा के प्रतिनिधि को एक रथ मे बठा हुआ दिखाया गया है। एक स्थान पर भसे के सिर वाली पुरुष आकृति *दिखाई गई है जिसन* फले हुए दाहिने हाथ मे माला ले रखा है। एक घोडे के या बकरी के सिर के आकार की आकृति है जिसका समीकरण हयग्रीव या अग्नि से किया जाता है। ये मूर्तिया साचो मे ढालकर बनाई गई हैं जिन पर नाक, कान आदि बा ऊपर से चिपका दिया गया है और फिर विभिन्न रगो से रग कर उन्हे सुन्दर रूप प्रदान किया गया है। मूर्तियाँ यक्ष, यक्षी, दुर्गा, महेश, भरव, अध पुरुष, नारी, पशु पक्षी, तथा बच्चो को अभिव्यक्त करती हैं।

नोह[1]

नोह का पथम काल शुग कुषाण युग की कला का प्रतिनिधित्व करता है। इस समय की महत्वपूर्ण उपलब्धि तत्कालीन म मण्मय मूर्तिया परवर्ती कुषाण युगीन मृण्मूर्तियो से अलग है। इस काल की मृण्मूर्तियो की खाली जमीन नही रहने दी गई है बल्कि फल बिखेर कर भर दी गई है। पर शवले पहले की भाति चपटी और चौडी हैं। पहनावे मे एक विशेषता आ गई है जिससे शुग काल की मूरते आसानी से पहचानी जा सकती हैं। एक तो सामने दो गाठा वाली पगडी है, दूसरी उनके पैरो के बीच धोती का तिकोना छोर नीचे की जमीन को छूता है। शुग युग मे यक्ष यक्षिणियो की भी अनेक मूर्तिया बनी। शुग और उसके *बाद कुषाण काल मे यक्षो और यक्षिणियो की मूरतें नगी अनेक भावो*

---

1 विजयकुमार युग-युगो म राजस्थान की प्रकाशनाधीन पाडुलिपि के आधार पर

के साथ सुन्दर वेश मे खडी तथा हाथी, मनुष्य बौनो पर अनन्त सख्या मे चढी पत्थर मे काटी गई। यक्षिणिग्रा का सम्बन्ध अवसर वृक्षो और लताग्रा से रखा गया है। वे अधिकतर पेड की शाखाग्रो को पकडे खडी हैं। इन्हें शाल मजिका कहा गया है। आभूषण खूब पहनती है, सिर के बाल मोतियो ग्रोर रत्नो की लडियो से जडे रहते है। शुग कुषाण युग के ग्रन्य खिलौनो म मेढ, मगर, भेड या बैल जुती गाडिया है— अद्भुत सुन्दर साचो में ढली हुई। इस युग से प्राप्त एक "हवन कुण्ड" तथा उसके पास से "पाप हव्वस" की मुद्रा वैदिक धम के पुन जीवित होने का सबल प्रमाण है।

नगर से महिषासुरमर्दिनी की 11 इच की एक मिट्टी की मूर्ति मिली है।[1] बीकानेर क्षेत्र के उत्तरी भाग मे स्थित रगमहल व बडोपल से कुषाण प्रभाव युक्त मण्मूर्तिया मिली हैं।[2] रगमहल से ही एक अद्वितीय मूर्ति मिली जिसके वस्त्र फले हुए ग्रोर बाल बिखरे हुये हैं। यह गधार कला का एक ग्रनुपम उदाहरण है। पुरुष प्रतिमाग्रा मे सिर नगा तथा दाढी रहित ग्रध्व भाग ही प्राप्त हो सके हैं। इन प्रतिमाग्रो के गले म कॉलर जैसा आभूषण है तथा उन्होने अपने कन्धे पर कोई वस्त्र डाल रखा है। स्त्री प्रतिमाग्रो का उध्व भाग नग्न या ग्रद्धनग्न है, जिसमे सिर पर ग्रोढने जसा वस्त्र है जो उनके कन्धो तक ग्राता है। ग्राभूषणा मे कुछ भारतीय व कुछ विदेशी हैं।

बीकानेर सग्रहालय[3] मे राजस्थान से प्राप्त कुषाण काल की कुछ मूर्तिया हैं जिनमें एक स्त्री का केवल उध्व भाग ही मिला है जिसके दाहिने हाथ मे दपण है।

नगरी[4] मे भी कुछ कुषाण कला के नमूने मिले हैं जो गधार मृण्मय कला से मिलत-जुलते हैं लेकिन उन पर यूनानी प्रभाव ग्रधिक नही है।

---

1 शर्मा, दशरथ (सपा) राजस्थान थ्रू दी एजेज, 1966, प 56
2 वही
3 वही, पृ 57
4 वही, पृ 57

मुण्डा (जिला गंगानगर) से एक मृण्मय कलाकृति प्राप्त हुई है।[1] यह कलाकृति कुषाण अथवा कुषाणोत्तर काल की है। और इसका निर्माण काल इस कृति में प्रदर्शित कला के आधार पर ईसा की दूसरी अथवा तीसरी शताब्दी ठहरता है। यह कलाकृति शिव के एक गण का अंकन करती है यह कलाकृति एक इंच लम्बी व 6 1/2 इंच चौडी है। यह शिव के गण के विकराल रूप को प्रदर्शित करती है। शिव का गण मांसल शरीरधारी बडे-बडे बाल फलाये, दांत निकाले तथा अपने हाथ में मुद्गर लिये प्रहार की मुद्रा में है। इसके गले में सर्प है तथा सर्प का यज्ञोपवीत शरीर पर है। बायां हाथ सिर पर है। उसकी बडी बडी मूछें हैं, पेट आगे निकला हुआ है, बायें पैर नीचे की ओर मोड ध्यानक मुद्रा में है। यह छवि घोरचक्र की है। डा सत्यप्रकाश के अनुसार इतनी प्राचीन कलाकृति अभी तक कहीं और से ज्ञात नहीं है। जोधपुरा[2] का पंचम काल शुंग एवं कुषाण काल की विशिष्ट मदपात्रों से सम्बन्धित है। अधिकतर पात्र चाक पर बनाये गये हैं तथा लाल रंग के मध्यम आकार के हैं। इन पर एक प्रकार का लेप है। पात्रों में अधिकतर ढक्कनदार कटोरे तथा हाण्डदार कटोरे मिले हैं।

1938 ई में के० एन० पुरी के तत्वाधान में रढ[3] का उत्खनन हुआ। इस स्थान से प्राप्त मकानों के ध्वसावशेषों, मिट्टी के मनके, लौह उपकरण, मृण्मूर्तियां, मदभाण्ड तथा सेलखडी की मंजूषा आदि सामग्री मौर्य, शुंग एवं शुंगोत्तर काल का प्रतिनिधित्व करते हैं। रढ से प्राप्त एक पत्थर की पटिया में रेलिंग के बीच में पेड की आकृति दिखाई देती है और इस पेड के पास एक मानव आकृति है जिसने सिरस्त्राण पहन रखा है। पुरी के अनुसार यह पट्टी प्रथम शताब्दी ई० पू० की है।

---

1 डा सत्यप्रकाश "गंगानगर जिले की एक रोचक एवं अद्वितीय मृण्मय कलाकृति", रिसर्चर खण्ड 8-9, 1966-68, पृ 85-86

2 विजयकुमार एक्सकवेशन एट जोधपुरा जिला जयपुर, साइक्लोस्टाइल्ड प्रतिलिपि सेमिनार ऑन दि हिस्ट्री एण्ड प्रोटोहिस्ट्री आफ राजस्थान, इतिहास विभाग राजस्थान विश्व विद्यालय, जयपुर, 26 28 दिसम्बर1976

3 एक्सकवेशन एट रढ

सिक्के

मौर्य साम्राज्य के पतन के पश्चात ई० पू० की दूसरी शती मे उत्तरी भारत पर पुन यूनानियो का आक्रमण हुआ, जिनके आक्रमण म राजस्थान भी अछूता नही रहा। उन्होने तत्कालीन शिवि जनपद की राजधानी मध्यमिका (नगरी, जिला चित्तोडगढ) पर भी आक्रमण किया। बराठ[1] के उत्खनन से चादी के आहत सिक्को के साथ साथ 28 सिक्के इण्डोयूनानी नरेशो के मिले हैं, जिनम हेलियोक्लीज, अपोलोडोटस, मिनेन्डर अथवा मिलिन्द, अन्तियाल्किदस, स्ट्रेटो प्रथम, एन्टीमेक स तथा हरमेयो-केलप्प और हरमेयो के सिक्के प्रमुख हैं। राजस्थान से इण्डो यूनानी राजाओ के सिक्को की प्राप्ति से यह निष्कर्ष नही निकाला जा सकता कि राजस्थान ई० पू० की दूसरी प्रथम शती म उत्तर पश्चिमी भारत स्थित यूनानियो के राज्य का एक अग था। वरन् राजस्थान की राजनीतिक स्थिति सुदृढ थी। यहा यह उल्लेखनीय है कि इण्डोयूनानी इतिहास का ज्ञान केवल सिक्को से ही होता है।

मालवा की राजधानी नगर (कार्कोट नगर, जिला टोक) मे थी, जहा के खेड के सर्वेक्षण एव उत्खनन से सहस्रो की सख्या म ताम्र मुद्राए मिली हैं जिनक अग्रभाग पर ई० पू० की प्रथम शती स ईसा पश्चात् की दूसरी-तीसरी शती तक की ब्राह्मी लिपि मे "मालवाना जय" लेख अकित मिलता है तथा पट की ओर वृक्ष, वृषभसिंह, कलश नन्दिपद आदि चिन्ह अकित मिलते हैं।[2] राजस्थान के टोक जिला स्थित रेढ[3] टीले अथवा नेढे स त्रिनामधारी ताबे के सिक्के मिले है, जिनके विषय मे विद्वानो का अनुमान है कि वे सभवत शुग वशी नरेशो के सिक्के हैं। रेढ से मिले सूर्यमित्र के सिक्के पर शुग युगीन ब्राह्मी लिपि में 'उदेहिकी' लिखा है तथा पृष्ठ भाग पर नन्दिन और यूपध्वज है। आकार में यह सिक्का चौकोर था वजन लगभग 41 ग्रेन है।

---

1 साहनी, दयाराम आर्कियालॉजिकल रिमेन्स एण्ड एक्सकवेशन एट बराठ, जयपुर

2 परमार, वी एम एस "राजस्थान क युगयुगीन सिक्के" रिसर्चर, खण्ड 12–13 (1972–73) पृ 5

3 पुरी, के एन, एक्सकवेशन एट रेढ

कुषाण नरेशो मे कुजुल कदफिसर (लगभग 50 ई) ने तावे के सिक्के चलाये। कुजुल कदफिस के पश्चात् उत्तरी पश्चिमी भारत पर वीम कदफिस ने शासन किया और यह प्रथम कुषाण नरेश हुआ जिसने भारत मे सर्वप्रथम सोने के सिक्के रोमन सिक्को के वजनमान पर चलाये। इस नरेश ने अपने पूर्वज की भांति तावे के सिक्के भी चलाये। वीम कदफिस के पश्चात कुषाण वश मे कनिष्क प्रथम (लगभग प्रथम शती ई) हुआ जिसने वीम की भाति सोने व ताबे के सिक्के प्रचलित किये। राजस्थान मे इन तीनो कुषाण नरेशो के सिक्के न तो किसी पुराने खेडे से और न ही किसी दफीने से मिले।

साभर से हुविष्क का एक ताबे का सिक्का मिला जो गजारोही प्रकार का है। नोह से हुविष्क एव वासुदेव का एक एक ताम्र सिक्का मिला।[1] यहा से मिला हुविष्क का सिक्का गजारोही प्रकार का तथा वासुदेव के ताम्र सिक्के मे राजा दाहिने हाथ से अग्निवेदी पर आहुति देते हुए ईरानी वेशभूषा मे अकित मिलता है तथा बाया हाथ कटि पर बधी तलवार थाम दिखाया गया है और पीछे त्रिशूल भी बना है, उसका टोप नुकीला है। पृष्ठ भाग पर सभवत शिव का अकन है।

साभर व नोह से मात्र एक या दो सिक्को का मिलना आकस्मिक ही है। ये सिक्के अवश्य ही किसी सास्कृतिक आदान प्रदान के द्योतक है।

राजस्थान के विभिन्न ऐतिहासिक स्थलो के उत्खनन से शुग एव कुषाण कालीन अनेक पुरावशेष यथा मृण्मूर्तिया तथा अन्य कलाकृतिया तथा सिक्के मिले जिनके आधार पर राजस्थान मे शुग एव कुषाण काल मे हो रही मानव क्रियाकलापो का ज्ञान होता है।

---

1 परमार वी एल एस, राजस्थान के युग युगीन सिक्के, रिसर्च, खण्ड 12-13 (1972-73) पृ 8

अध्याय–6

गुप्त स्तर

जिस समय तीसरी शताब्दी ई॰ मे गुप्त वंश की स्थापना हुई, भारतवर्ष कुषाण और सातवाहन साम्राज्यों के विघटन के परिणामस्वरूप उत्पन्न अराजकतापूर्ण स्थिति म गुजर रहा था। उस समय देश मे कोई साम्राज्यिक शक्ति नही थी वरन् छोटे छोटे राज्य थे जैसे कि छठी शताब्दी ई॰ पू॰ म सोलह महाजनपद। वस्तुत अनेक दृष्टि से प्राक्गुप्तयुगीन भारत की राजनीतिक स्थिति छठी शताब्दी ई॰ पू॰ की राजनीतिक स्थिति से तुलनीय है।[1] उस समय भारत मे दो प्रकार के राज्य थे— गणतन्त्री तथा राजतन्त्रीय। य राज्य पश्चिमोत्तर भारत पर होने वाले विदेशी आक्रमणो के प्रति उदासीन थे। लेकिन यह स्थिति अधिक समय तक नही रही। इन विदेशी शक्तियो मे मुख्यत कुषाण संस्कृति क प्रादुर्भाव न भारतवर्ष की उन शक्तियो को ललकारा जो भारत की धरती पर पैदा हुई थी। यहा के हिन्दू धर्म ने समय के साथ-साथ अपने को परिवर्तित किया जिसमे सैनिक शक्ति के संरक्षण को पर्याप्त महत्व दिया गया और यही शक्ति उदित हुई परमप्रतापी गुप्त शासको के शासन काल में। गुप्त शक्ति का उदय गांग्य उपत्यका में हुआ था परन्तु उसके प्रताप से राजस्थान भी अछूता नही रहा। राजस्थान मे गुप्त संस्कृति के अनेक साक्ष्य मिले हैं। तीसरी शती तथा

---

1 इण्डर मरोहर, म म दवाकान्त गुप्त एज, (1954) अध्याय 2 स 5

चौथी शती के प्रारम्भिक दशकों में भारत की राजनीतिक स्थिति का ज्ञान समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति से होता है जिसका उल्लेख अध्याय-2 में किया गया है। आगे हम राजस्थान में विभिन्न एतिहासिक स्थलों म गुप्त संस्कृति की स्थिति के बारे में वर्णन करेंगे।

मूर्ति एवं स्थापत्य कला

राजस्थान की सर्वतोमुखी सांस्कृतिक उन्नति म विभिन्न कलाओं के विकास का महत्त्वपूर्ण स्थान है। कला की उन्नति क लिये जिस शान्ति तथा सम्पन्नता की आवश्यकता होती है वह गुप्त काल म विद्यमान थी। अतएव इस काल मे विभिन्न प्रकार की कलाओं की अत्यधिक उन्नति हुई। गुप्तकालीन कला की मुख्य विशेषता यह है कि वह विदेशी प्रभाव से काफी सीमा तक मुक्त थी। गुप्त साम्राज्य की स्थापना से पूर्व भारत मे अनेक विदेशी जातियाँ प्रवेश कर गई थी, परिणामस्वरूप भारतीय कला पर इन विदेशी जातियों की सांस्कृतिक अभिरुचियों का दिग्दर्शन होने लगा था परन्तु गुप्तकालीन कला ने इस विदेशी प्रभाव को उखाड़ फेंका और भारतीय कला अनेक अर्थों मे विकसित हुई।

वास्तु कला के क्षेत्र म यद्यपि गुप्त युग की सफलता काफी अधिक है तथापि यह नहीं कहा जा सकता कि इस कला का यह उत्कृष्टतम रूप प्रस्तुत करता है। गुप्तकाल मे मंदिर निर्माण कला का संभवत जन्म हुआ और इसका पर्याप्त विकास भी किन्तु आगे के कालों में इस कला का और अधिक विकास हुआ। इस प्रकार गुप्त काल को इस बात का गौरव प्राप्त है कि इसने एक ओर जहा मूर्तिकला तथा चित्रकला का विकास को चरम सीमा पर पहुंचाया वहीं दूसरी ओर मंदिर निर्माण कला क क्षेत्र में इसने विकास की महती संभावनाओं को जन्म दिया।

गुप्त काल मे मूर्तिपूजा का प्रचलन बहुत बढ गया था अत देवी देवताओं की मूर्तियां भी उपासना तथा पूजा के लिए बनाई जाने लगी और देवालय में इनकी स्थापना की गई। इसका परिणाम यह हुआ कि इस काल में मूर्ति निर्माण की बड़ी उन्नति हुई।

प्राप्त होता है।[1] भरतपुर जो मथुरा का निकटवर्ती प्रदेश तथा प्राचीन वृजमण्डल का भाग है (जहा गुप्त काल की प्रतिमा निर्माण कला का जन्म हुआ था), से गुप्त एव गुप्तोत्तर काल की प्रचुर मात्रा मे मूर्तिया मिली हैं। यही से गुप्त मूर्तिकला की मानव आकृति भी उपलब्ध होती हैं। उन मूर्तियो मे स्त्री पुरुष तथा पशुओ व कई प्रकार के पत्र-पुष्प आदि के अलकरण उपलब्ध होते हैं।[2] गुप्तकाल की यह परम्परा आठवीं शताब्दी ई० तक धौलपुर, करौली, चित्तौडगढ, डूगरपुर इन्द्रपुर तथा अलवर के क्षेत्रो मे जीवित रही।

राजस्थान के विभिन्न भागो से तथा विशेषकर सरस्वती तथा दषद्वती की घाटी तथा नलियासर के समीप साभर के उत्खनन मे हमें प्रचुर सख्या मे पिटवा मिट्टी तथा चिकनी मिट्टी की बनी मण्मूर्तिया प्राप्त हुई जो काफी सुन्दर व सुडौल है। गगानगर क्षत्र के रगमहल मुण्डा, बडोपल तथा पीर सुलतान की ढेरी से गुप्तकालीन मण्मूर्तिया प्राप्त हुई हैं। ये सब गुप्त काल की प्रस्तर कला के इतिहास पर गहरा प्रकाश डालती हैं।[3]

नलियासर साभर के विभिन्न स्तरो स मदभाण्ड मिले हैं जिनमे टोटीदार कलश मुख्य हैं। इन कलशो के हत्थे तथा टोटिया पर अनेक प्रकार का चित्रण है। कई कलशो के हत्था पर शिव या शिवपार्वती के हाथो से गगा की धारा के प्रवाह का चित्रण शिव की स्थानक मुद्रा म दर्शाया गया है। कई पात्रो पर विभिन्न पशु व पक्षियो का अलकरण है। एक कलश की टोटी पर अकित चित्रण मे एक स्त्री घुटने के बल बठी अपने दोनो हाथो से पानी पिला रही है। ये सभी उदाहरण कला के उत्कृष्ट नमूने हैं[4] साभर के ही दूसर स्तर के मकान न 5 स एक सफेद मिटटी की नारी मूर्ति मिली है जिसने कमर पर 6 लडियो की सजडी पहन रखी है तथा उसके दोनो परो के बीच एक फुदना लटका

---

1 शर्मा, दशरथ (सपा) राजस्थान थ्रू दी एजेज, 1966, प 69

2 वही, प 60

3 वही,

4 द्रष्टव्य साहनी दयाराम आर्कियोलाजिकल रिमेंस एण्ड एक्सकेवेशन एट साभर, जयपुर

हुआ है। यह किसी देवी की मूर्ति है और म गुप्त कालीन पद्धति मे बनायी हुई है।[1] एक अन्य मकान से एक मृण्मूर्ति प्राप्त हुई है जिस पर गगनाचारी गधव को दिखाया गया है। यह पारम्परिक गुप्त काल की है।[2] अन्य पुरावशेष जो कि पारम्परिक गुप्तकालीन मृण्मय कला के हैं उनम से एक मृण्मूर्ति मे उमा व महेश्वर अलग अलग खड हुए हैं जो कि प्राचीन कौशाम्बी स प्राप्त मण्मयमूर्ति से काफी समानता रखते हैं। इस मूर्ति म उमा महेश्वर के दायी ओर खडी है तथा बाया हाथ उसने अपने कूल्ह पर रखा है। उसने सिर पर फूलो से सुशोभित शिरस्त्राण पहन रखा है, उसकी कमर पर तगडी तथा पैरों मे आभूषण हैं। महेश्वर की मूर्ति के पर टूटे हुए हैं।[3] यहा उल्लेखनीय है कि शिव व पार्वती के एक साथ बठ हुए नमून तो प्रचुर सख्या मे मिले हैं लेकिन शिव और पार्वती की खडी मुद्रा दुलभ है। मुख्य ग्वाड के मकान न 5 से एक मूर्ति मिली है जो देवी दुर्गा की है। इसके सामने एक भैंसे के बलिदान का चित्रण है इसके सीन का ऊपरी भाग टूटा हुआ है तथा सिर अलग पडा हुआ है। यह मूर्ति साच मे ढली हुई सफद मिट्टी की है।[4] इसी मकान से एक चक्की तथा सिलबट्टा प्राप्त हुआ है जिस पर मसाले पीसे जाते थे। अन्य पुरावशेष जो इसी मकान से मिला वह कुम्हार का मुगरा जो चिकनी मिट्टी का तपाकर बनाया गया है। इस मुगर पात्रो को चाक से उतारने के पश्चात सुडौल करने के काम म लिया जाता था। इस मुगरे पर गुप्तकालीन ब्राह्मी लिपि मे कुछ अकित है।[5] मकान न 14 से एक बन्दर की मूर्ति मिली है जिसने अपन बायें हाथ का पजा ठोडी पर लगा रखा है। यह गुप्त कला का एक रोचक उदाहरण है।[6]

---

1 वही, प 26

2 वही प 22

3 वही, प 26

4 साहनी, दयाराम आर्कियोलाजिकल रिमन्स एण्ड एक्सकवेशन सामर, जयपुर प 26

5 वही, प 26

6 वही, प 30

साभर के उत्खनन से प्राप्त पुरावशेषो मे यहा के पात्र विशिष्ट हैं। गुप्त काल के सभी पात्रा की विशेषता यह है कि इन पात्रा को भली प्रकार से सवारा गया है। इन पात्रा पर विभिन्न ज्यामितिक आकार तथा वनस्पतिया का अलकरण है। इन पत्रो पर चित्रण कुरेदकर या साँचे म ढालकर किया जाता था। साभर से प्राप्त मृद्‌पात्रा के आधार पर कहा जा सकता है कि गुप्तकालीन कुम्हारो की मृद्‌पात्र कला काफी विकसित व सुदर थी।

धर्म

कोटा जिले के चरचामा, मुकन्दरा तथा कृष्ण विलास से प्राप्त गुप्त मन्दिर गुप्तकाल तथा गुप्तकाल के पश्चात के लोगा के शव धम तथा वैष्णव धर्म के प्रति झुकाव बताते हैं। बडौदा के डॉ यू पी शाह को भीनमाल (जिला जालोर) से विष्णु की स्थानक पाषाण प्रतिमा तथा मडोर मे दो बृहत आयताकार पाषाण स्तम्भो पर श्री कृष्ण भगवान के जीवन की विभिन्न लीलाओ का चित्राकन (जो अब सरदार सग्रहालय जोधपुर मे सुरक्षित है) प्राप्त हुआ।[1] गगानगर जिले के बडापल तथा मुभडा से प्राप्त मिट्टी की मूर्तियो क टुकडे उस काल क लोगा के वष्णव धर्म प्रेम को प्रदर्शित करते हैं। इसी प्रकार पाली स प्राप्त बहत लाल पत्थर की विष्णु की स्थानक प्रतिमा आदि वैष्णव मूर्तिया मिली हैं जो गुप्तोत्तर काल की है। काँमा (जिला भरतपुर) स प्राप्त विष्णु क अवतारो मे वराह, वामन मतस्य, कूम आदि की प्रतिमायें तथा बलराम रेवती से बहत पाषाण मूर्तिया प्राप्त हुई हैं जो गुप्तकाल मे पूर्वी राजस्थान मे वैष्णव धम के बढते हुए प्रभाव को बताती हैं।

राजस्थान के अनेक स्थलो से प्राप्त अभिलेख भी विष्णु सम्प्रदाम के बढते हुए प्रभाव को सिद्ध करते हैं। नगरी (जिला चित्तौडगढ) से प्राप्त अभिलेख जिसकी तिथि विक्रम सवत 481 (425 या 427 ईसा काल) है, म तीन भाइयो द्वारा एक विष्णु मन्दिर बनवाने का उल्लेख है। गगधार (जिला झालावाड) से प्राप्त पाषाण स्तम्भ अभिलेख

---

1 शर्मा, दशरथ (सपा) राजस्थान थ्रू दी एजेज, 1966, पृ 63

जिसकी तिथि विक्रम सवत् 480 (424 या 423 ईसा काल) है, विष्णु व इन्द्र की स्तुति के साथ प्रारम्भ होता है। यह अभिलेख यह भी बताता है कि विश्व वमन के यहा एक मयूर राक्ष[1] नामक मन्त्री था, जो वष्णव धर्म का प्रबल अनुयायी था। उसने अपने बेटा द्वारा एक विष्णु का भव्य मदिर भी बनाया था। गगानगर जिले के मुण्डा ग्राम से एक खण्डित मिटटी की मूर्ति मिली है जिसके आधार पर गुप्त लिपि म अस्पष्ट रूप से "यशोदाकृति' अर्थात वासुदेव कृष्ण की माता यशोदा का चित्रण अकित है। लेकिन जहा से वैष्णव धम के अभिलेख मिले हैं यहा के लोग केवल विष्णु की ही पूजा नही करते थे वरन् शिव तथा अन्य देवताओ मे भी श्रद्धा रखते थे।

कोटा क्षेत्र के चरचोमा नामक स्थान से प्राप्त शिव मदिरा पर गुप्त लिपि मे पाषाण अभिलेख इस तथ्य को सिद्ध करते हैं कि गुप्त काल मे वहा के निवासी शव धम मे अगाध श्रद्धा रखते थे।[2] गगानगर जिले के रगमहल व बडोपल आदि से प्राप्त मण्मूर्तियो के उभार शैव धम की प्रासगिकता सिद्ध करते हैं। इन सभी उदाहरणो मे सबसे महत्वपूण रगमहल से प्राप्त शिव-पावती की मूर्ति तथा बडोपल से प्राप्त शिव लिंग है।[3] रगमहल से प्राप्त मृण्मय मूर्तिया मे शिव को उसके वाहन नदि पर बैठा हुआ दिखाया गया है। शिव व उसके अन्य पुरुष भक्ता को घोती पहने हुए जो उनके घुटनो तक आती है, तथा घोती का छोर उनके परो के मध्य मे लटका हुआ है, दर्शाया गया है। एक अन्य मूर्ति मे पावतो अपने पति के बायी ओर बठी है। उसके बायें हाथ म एक दपण है। पावती तथा उसकी उपासिकायें राजस्थानी तरीके से घाघरे पहने हुए हैं। शिव के सिर के अग्रभाग पर उसकी तीसरी आंख लम्बवत बताई गई है। साभर से प्राप्त एक मृण्मूर्ति मे एक स्त्री किसी पुरुष की जाघ पर बठी है जो सभवत शिव व पावती के काम (वासना) को दर्शाती है। शिव का एक अ कन दो शिवलिगा के रूप मे है जिसके आधार का उभार शिव व पावती के विवाह का सूचक है। ये सभी उत्तर-पूर्वी राजस्थान मे शव धम के प्रभाव को सूचित करते ह।

---

1 फ्लीट, का ऐ ना हू इ जिल्द 3, प 76

2 शर्मा, दशरथ (सपा) पूर्वोक्त, प 64

3 वही,

राजस्थान म विष्णु व शिव के अतिरिक्त भी कई अन्य देवी देवताओ की आराधना को जाती थी जिसे विभिन्न स्थाना से उपलब्ध मूर्तिया म भली प्रकार देखा जा सकता है। त्रिशूलपाणि तथा असुरसहारिणी देवियो के भी शिलापटट लेख मिलते हैं जिन्हे कभी उदयपुर क्षत्र की छोटी सादडी से दो मील दूर भवरमाता मदिर के किसी ताक म लगा दिया गया था लेकिन वतमान मे य उदयपुर सग्रहालय म सुरक्षित है।[1]

नलियासर सांभर[2] से प्राप्त सफद मिट्टी के टुकडा पर देवी दुर्गा द्वारा महिषासुर के सहार का चित्रण मदपात्रो के हत्था एव गदन पर शिव की त्रिनेत्र मूर्ति का चित्रण तथा रढ 2 क स प्राप्त एक मतबान के हत्थे का टुकडा व एक नग्न स्त्री जो हाथ जोड खडी है पवित्र गगा का प्रतिरूप प्रदर्शित करती है, राजस्थान के निवासियो द्वारा दुर्गा और गगा के महत्व को सिद्ध करते है।

वैदिक कमकाण्ड का प्राबल्य बढोतरी पर था। गुप्तकालीन कुछ अभिलेखो म यज्ञो का भी उल्लेख आया है उनका वणन करना भी यहाँ समीचीन है। लगभग चौथी शताब्दी ई के एक खण्डित अभिलेख स सवप्रथम वाजपेय यज्ञ का ज्ञान होता है।[3] गगधार पाषाण स्तम्भ अभिलेख (विक्रम सवत 480) मे तखरमन राजा द्वारा यज्ञ क माध्यम से ईश्वर को पसन्न किये जाने की चर्चा है।

इस प्रकार विभिन्न स्थलो से प्राप्त अभिलखा मूर्तिया तथा मदिरा स राजस्थान म गुप्तकालीन धामिक स्थिति का बोध होता है।

आर्थिक दशा

राजस्थान के ऐतिहासिक पुरातात्विक विभिन्न स्थलो के सर्वेक्षण तथा उत्खनित स्थला से गुप्त सम्राटो के सिक्के प्राप्त हुए हैं जिससे गुप्त शासको की आर्थिक दशा कला के प्रति रुचि, सौन्दर्यप्रियता तथा उनके

---

1 शर्मा दशरथ (सपा) पूर्वोक्त, प 65
2 17क। द्रष्टव्य, साहनी दयाराम आर्क्योलाजिकल रिमस एण्ड एक्स-कवेशन एट साभर, जयपुर, एक्सकवेशन एट रेढ जयपुर
3 शर्मा, दशरथ (सपा) पूर्वोक्त प 66

विभिन्न क्रियाकलापो की झाकी मिलती है। बयाना[1] (जिला भरतपुर) से प्राप्त 1821 सोने के सिक्को के ढेर से गुप्त शासको की आर्थिक स्थिति का प्रत्यक्ष प्रमाण मिलता है। इस ढेर मे सबसे अधिक सिक्के चन्द्रगुप्त द्वितीय (विक्रमादित्य) के हैं। इन सिक्को मे कई नये प्रकार के सिक्के हैं जो गुप्त शासको के सिक्को की विविधता प्रमाणित करते हैं। इस ढेर से प्राप्त सिक्को से गुप्त वशीय कायगुप्त तथा कुमारगुप्त के इतिहास पर नया प्रकाश पडता है। यह अनुमान लगाया जाता है कि लगभग 540 ई मे हूणो के आक्रमण के समय इस खजाने को जमीन मे गाड दिया गया था। इस सिक्को मे चन्द्रगुप्त प्रथम के 10, समुद्रगुप्त के 183, काचगुप्त के 6, चन्द्रगुप्त द्वितीय के 983, कुमारगुप्त प्रथम के 618 तथा स्कन्दगुप्त का 1 सिक्का मिला है। गुप्त नरेशो के सिक्को मे ब्राह्मी लिपि एव सस्कृत भाषा[2] मे छन्दोबद्ध लेख उत्कीर्ण हैं जिनसे भारतीय सिक्कों की मौलिकता पर अच्छा प्रकाश पडता है। राजस्थान सरकार के पुरातत्व एव सग्रहालय विभाग ने 1962 मे वैढ[3] से (जो टाक जिले के प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थल रैढ के निकट है) 6 गुप्तकालीन स्वर्ण मुद्रायें प्राप्त की। इस स्थान पर ये मुद्रायें सभवत व्यापारिक सम्बन्धो के आदान प्रदान से पहुची होगी। इन सिक्को मे 1 समुद्रगुप्त का तथा 5 चन्द्रगुप्त द्वितीय के हैं। चन्द्रगुप्त द्वितीय के चार सिक्को मे तीन धनुर्धारी और एक छत्रधारी ढग का है। शेष एक सिक्का किदार का है जो परवर्ती कुषाण शासक हो सकता है। इनमे गुप्तकालीन ब्राह्मी लिपि का प्रयोग किया गया है। जयपुर क्षेत्र के मरोली के समीप बुन्देवाली डूगरी से चन्द्रगुप्त प्रथम समुद्रगुप्त तथा चन्द्रगुप्त द्वितीय के सिक्के मिले हैं। समुद्रगुप्त के परशुधारी प्रकार तथा चन्द्रगुप्त द्वितीय के धनुर्धारी प्रकार के सिक्के जयपुर के अज्ञात स्थानो से मिले है जो जयपुर

---

1 अल्तेकर, ए एस दी क्वाइनज आफ दी गुप्ता एम्पायर (1957) पृ 310-316

2 अल्तेकर, ए एस बेयाना और गुप्ता गोल्ड क्वाइन्स फ्राम बयाना, पृ 7-61

3 वैढ से मिले सिक्के निदेशालय, पुरातत्त्व एव सग्रहालय, जयपुर मे सुरक्षित है

महाराजा के निजी सग्रहालय मे सुरक्षित है।[1] गौरीशकर ओझा को अजमेर से 5 रजत सिक्के तथा सत्यप्रकाश को कुमारगुप्त प्रथम का एक सिक्का प्राप्त हुआ, जो तत्कालीन समय के लोगो की धार्मिक तथा कलात्मक रुचि को बताते हैं। नलियासर साभर से प्राप्त कुमारगुप्त प्रथम के चादी के सिक्के पर कलात्मक रूप से बनाय गय मोर का चित्राकन स्वामी कार्तिकेय के वाहन का द्योतक है जिसका कि गुप्त शासन के कुछ भागो मे आराधना होती थी। चूकि साभर से मात्र एक ही सिक्का मिला है अत यह स्पष्ट रूप म नही कहा जा सकता कि यह क्षत्र कुमारगुप्त प्रथम के अधिकार मे था अथवा किसी साम्कृतिक या आर्थिक आदान प्रदान के कारण आया। कुमारगुप्त के पश्चात उसक उत्तराधिकारी स्क दगुप्त हुआ जिसन केवल तीन या चार प्रकार क सिक्के चलाये। राजस्थान म बायाना स स्कन्दगुप्त का कवल एक ही सिक्का मिला है। परवर्ती गुप्त नरेशो म पुरगुप्त व नरसिंहगुप्त प्रमुख हुए। राजस्थान की सीमा के भीतर इन परवर्ती गुप्त नरेशो के सिक्के अब तक नही मिले है।

इस प्रकार राजस्थान के विभिन्न ऐतिहासिक पुरातात्विक स्थलो से प्राप्त अभिलेख, सिक्के, मण्मूर्तियो, प्रस्तर मूर्तिया तथा मदिरो के अवशेष राजस्थान से गुप्तकालीन त्रिया कलापो की झाकी प्रस्तुत करते हैं।

---

1 देखिए ज यू सो इ, जिल्द 5

अध्याय-7

उपसहार

पुरातात्विक साक्ष्यो का अध्ययन इस वहुप्रचलित धारणा का खण्डन करता है कि मरुस्थली होने के कारण राजस्थान मानव सस्कृति के लिये आकर्षण का क्षेत्र नही था। उक्त धारणा का आधार परवर्ती साक्ष्य है और अशत परवर्ती पर्यावरण की प्रतिकूलता भी परन्तु प्रागितिहासिक काल से लेकर आज तक कि स्थितियो का विवेचन इस ओर सकेत करता है कि राजस्थान की जलवायु और पर्यावरण कभी भी इस सीमा तक प्रतिकूल नही रहा कि वह मानव के लिये विकर्षण क्षेत्र बन जाय। अस्थायी प्रतिकूलता मे सचरण और नये क्षेत्रो की तलाश तथा अनुकूल स्थिति मे प्राय उन्ही या सीमावर्ती क्षेत्रो मे वापस आकर बसने के पर्याप्त प्रमाण हमे उपलब्ध होते है। सिंधु सभ्यता के ह्रास और परिणति के बाद उन्ही क्षेत्रो मे नदियो के प्राचीन प्राचीन किन्तु सूखे बहाव क्षेत्र धूसर चित्रित पात्र सस्कृति के पुरास्थलो की प्राप्ति उक्त धारणा को समर्थन देती है। समय के साथ प्रकृति से सघर्ष करने और उसे अपने अनुकूल बना सकने की मानव की क्षमता और तकनीक मे भी विकास हुआ है, इसके साक्ष्य भी हमे राजस्थान के पुरातत्व से प्राप्त होते हैं।

राजस्थान मे मानव सस्कृति के विकास के दो आयाम हैं। पहले आयाम मे तकनीक और आबादी की बढोतरी के साथ नये क्षेत्रो की तलाश म लोगो ने नदिया के किनारे किनारे या पहाड की ढलानो के साथ सचरण किया। दूसरे मे विषम पर्यावरण के कारण उन्हे अपने

पुराना क्षेत्र छोडकर पलायन करना पडा । सचरण दोनो ही परिस्थितियों मे हुआ । सचरण की यह प्रक्रिया राजस्थान की अपनी वतमान भौगोलिक सीमाओ तक ही सीमित नही था और न ही अतीत मे आज जसी उसकी राजनैतिक सीमा थी । राजस्थान मे मानव सस्कृति का विकास वस्तुत उत्तर-पश्चिम भारत और अन्य दिशाओ म इससे जडे भौगोलिक क्षत्रो म होने वाले मानव के विकास से किसी भी अथ मे पृथक नहीं है । हर कभी इस प्रात के कुछ क्षेत्र सभ्यता और सस्कृति के विस्तार मे अग्रणी थे 'दाता" के रूप म थे और कभी प्राप्त कर्ता के रूप म थे। आदि मानव का पदापण राजस्थान म बाहर से हुआ अथवा उसकी उत्पत्ति स्थानीय है इस विषय म कुछ भी नही कहा जा सकता । उसके द्वारा छोड गये प्रस्तर उपकरणो की अन्य क्षत्रो स प्राप्त उपकरणो स तुलना क आधार पर कवल इतना कहा जा सकता है कि उसकी प्रगति शेष भारत के मद्रासियन उपकरण परम्परा (Madarasian tool tradition) वाले मानव स अभिन्न थी । राजस्थान मे अय पाषाण युगो मे भी प्राय यही स्थिति दिखाई देती है । नव पाषाण युग के विषय म कुछ कहना कठिन है क्योकि इसक अवशेषो की जानकारी इस क्षत्र म अब तक नगण्य सी है । सिन्धु सभ्यता की पूववर्ती ताम्रपाषाणयुगीन ग्राम्य सस्कृतियो का सही आकलन और सिन्धु सभ्यता के निर्माण म उसक सभावित योगदान का मूल्याकन साक्ष्यो के अभाव म अभी तक नही हो सका है । साथी सस्कृति स सिन्धु सभ्यता की उदभावना की बात कभी बड आरक्षित शब्दो मे उठाई गई थी । "परिकल्पना" के रूप मे जो आज प्राय सिद्धान्त सी बन गई है पर उत्खनन के द्वारा इस तथ्य की परिपुष्टि अब तक नही हो सकी है । स्वातन्त्र्योत्तर काल के पिछले तीन दशको म पुरातत्व की दृष्टि स राजस्थान मे व्यापक सर्वेक्षण और सीमित उत्खनन काम हुए हैं परन्तु सक्षम लोगो द्वारा इस सामग्री के सागोपाग विवेचन और अध्ययन के परिणाम अब भी प्रकाशित ग्रन्थ या निबन्ध के रूप मे प्रतीक्षित है । यह बात सही है गोष्ठियो म स्फुट साक्ष्यो के आधार पर सतही सामान्यीकरण अवश्य किये गये हैं और सभावित सिद्धान्त भी प्रतिपादित किये गये हैं ।

प्राय सभी ग्रन्थो म एक बात अविकल रूप म दुहराई गई है कि सिन्धु सभ्यता के सभी स्थल 1947 में भारत विभाजन के बाद पाकिस्तान में चले गये अस्तु भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग ने

चुनोती के रूप मे भारतीय क्षेत्र में व्यापक सर्वेक्षण कर अनेकानेक सिंधु सभ्यता से सम्बन्धित स्थल खोज निकाले जिनमें राजस्थान का कालिबगा भी एक है। कालीवगा से प्राक सिंधु सभ्यता के स्तर भी उपलब्ध हुए हैं परन्तु इनका समवाय भारतीय क्षेत्र में उत्खनन और सर्वेक्षण के माध्यम से अन्य सस्कृतियो से जोडने का प्रयास नही हुआ। शायद चुनोती का अभाव था।

सिंधु सभ्यता के तुरन्त बाद राजस्थान में दो प्रमुख सस्कृतियो के अवशेष प्राप्त होते हैं जिनमे एक का प्रमुख केन्द्र दक्षिणी पूर्वी राजस्थान है। यह सस्कृति आहाड या बनास के नाम से अभिहित की गई है। इस सस्कति का मुख्य लक्षण काले और लाल रग की पात्र परम्परा है जिसका विस्तार–लोथल (समसायिक नही है), महाराष्ट्र और मध्य-प्रदेश तक दिखाई पडता है। दूसरी सस्कृति गेरुये रग के पात्र परम्परा से जुडी है जिसका विस्तार उत्तरी पूर्वी राजस्थान मे हुआ। इस सस्कृति का प्रसार उत्तर प्रदेश तक है। अद्यतन साक्ष्यो के आधार पर कहा जा सकता है कि गेरुये पात्र परम्परा का जन्म भी राजस्थान म ही हुआ। नीम का थाना (जीला सीकर) से प्राप्त विशाल ताम्र उप–करण और उसी क्षेत्र से गेरुये पात्रो का मिलना इस बात का सकेत है कि सिंधु सभ्यता के लोगो के लिये ताम्र उपकरणो की आपूर्ति राजस्थान की खेतडी ताम्र खदानो से होता था। ऐसा प्रतीत होता है कि सिंधु सभ्यता और उसके बाद कुछ समय तक राजस्थान सभ्यता और सस्कृति की एक महत्वपूण धुरी रहा। केवल यही एक धुरी था और यही से सभ्यता और सस्कृति का विकिरण हुआ, यह कहना ज्यादती होगी परन्तु इतना अवश्य कहा जा सकता है कि इस काल मे इसकी स्थिति दाता के रूप मे थी।

आरम्भिक ऐतिहासिक काल मे निर्विवाद रूप से गगा की उपत्यका सभ्यता और सस्कृति की धुरी बन चुकी थी। यही कारण है कि धूसर चित्रित पात्र और उत्तर भारतीय कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा मे जुडी सस्कृतियो की व्याप्ति गगा घाटी और सिंधु गगा विभाजक (Indo Gangatic divide) क्षेत्र मे अधिक दिखाई पडती है। राजस्थान मे इन सस्–कृतियो का विस्तार अन्तमुखी कहा जा सकता है जबकि इसके पूव की सस्कृतियो का विस्तार राजस्थान के सन्दर्भ में बहिर्मुखि था, अर्थात ये

सस्कृतिया राजस्थान से बाहर की ओर प्रसारोन्मुख थी। इस दूसरे काल मे राजस्थान अनेक सास्कृतिक धाराओ से आप्लावित हुआ। इन सस्कृतियो का फलाव राजनैतिक प्रभुता के विस्तार के साथ हुआ। मौय, शुग, शक, कुषाण और गुप्त साम्राज्या के विस्तार से राजस्थान का क्षेत्र अछूता नही रहा। इन तमाम राजनीतिक परिवतनो स अनेकानक सास्कृतिक धाराओ का समागम और सश्लेषण हुआ। राजस्थान के एतिहासिक पुरातात्विक साक्ष्य इस समागम के साक्षी हैं। राजनैतिक स्तर पर विरोध और सघष के बाद भी सामाजिक और सास्कृतिक स्तर पर समन्वय की एक अविरल धारा सतत प्रवाहित रही। इस दूसरे काल मे राजस्थान ने न केवल अनेकानेक सास्कृतिक धाराओ को अगीकार किया बल्कि उनके पल्लवन और प्रसारण मे भी योगदान दिया। मौय, शुग, कुषाण या गुप्त शली की कला का विकास राजस्थान म स्वत त्र रूप से हुआ जिसमे रचनात्मका की झलक दिखाई देती है।

संदर्भ - ग्रथ सूची

क उत्खनन प्रतिवेदन (एक्सकॅवेशन रिपोर्ट्स)

पुरी, के एन	एक्सकवेशन एट रड, जयपुर स्टेट (1939)
भण्डारकर, डी आर	आर्कियालोजिक्ल रिमेन्स एण्ड एक्सकवेशन एट नगरी, मेमायस आफ दी आर्कियोलाजिकल सर्वे आॅफ इ डिया, 1920
साहनी, डी आर	आर्कियोलाजिकल रिमेन्स एण्ड एक्सकवेशन एट बराठ, जयपुर (1936)
साहनी, डी आर	आर्कियोलोजिकल रिमेन्स एण्ड एक्सकॅवेशन एक सांभर, जयपुर (1936-38)
साकलिया, एच डी	एक्सकॅवेशन एट आहार, डेक्न कॉलेज, पूना, 1969
ह नारीड	एक्सकवेशन एट रगमहल, ल दन (1952-54)

ख शोध निबन्ध

अग्रवाल, आर सी एव विजयकुमार	जयपुर रीजन एक्सकॅवेशन एट एक्सप्लोरेशन, जयपुर हिस्ट्री एण्ड ट्रेडीशन, डिपाटमेन्ट आफ हिस्ट्री एण्ड इ डियन कल्चर राजस्थान यूनिवर्सिटी, जयपुर, 1978

अग्रवाल, डी पी
सी–14 डटस, बनास कल्चर एण्ड दी श्रायस, करेंट साइंस, खण्ड 35, श्रंक 5 (1966)

कृष्णन, एम एस
इवोल्यूशन श्राफ दी डजट इन प्रा सिम्पो राज डेजट नु ने सा ई जिल्द 1, 1952, प 19

घाप, ए एन पाणिग्रही, के सी
पाटरी श्रॉफ श्रहिच्छात्रा ए ई, श्रंक (1946), प 37–59

जोशी, जगत पति
एक्सप्लोरेशन इन कच्छ एण्ड एक्सकवेशन एट सुरकोटडा एण्ड न्यू लाइट श्रान हरप्पन माइग्रेशन ज श्रो ई, जिल्द 22 श्रंक 1-2, प 98–144

दीक्षित, के एन
राजस्थान श्रर्ली कल्चर्स रिसचर खण्ड 2, प 35–38

निगम, जे एस
नादन ब्लक पालिश्ड वेयर श्राग जिल्द 14 श्रंक 3 (जून 1961) प 36

परमार, बी एम एस
नोह एक्सकवेशन स्ट्रटीफिकेशन एण्ड क्रोनोलाजी (ट्रेंच ए बी सी डी इ) रा हि का श्रड सशन उदयपुर (1969), प 21–24

परमार, बी एम एस
राजस्थान के युगयुगीन सिक्के रिसचर, खण्ड 12–13 (1972–73) प 1–18

बनर्जी, श्राद्रिस
सीक्वन्स श्राफ कल्चर्स इन राजस्थान, मेन इन इंडिया, खण्ड 43, प 225–32

मिश्रा, वी एन
नागौर ए लेट पोलिश्रोलिथिक सटलमण्ट इन नाथ वेस्ट इंडिया, वल्ड श्रार्कियालाजी, जिल्द 5, प 92–111

मोहापात्रा, जी सी एव अन्य	दि डिस्कवरी आफ ए स्टान एज साइट इन दि इ डियन हेजट, रिसर्च बुलेटिन ऑफ दि पजाब यूनिवर्सिटी, जिल्द 14, खण्ड 3–4, (दिसम्बर 1963), पृ 215–223
लाल, बी बी	एक्सकॅवेशन एट हस्तिनापुर, ए इ, अक 10–11 (1954–55), प, 5–151
लाल, बी बी एव थापर, बी के	एक्सकवेशन एट कालीबगा, कल्चरल फोरम (जुलाई 1967), प 80
विजयकुमार	एक्सकवेशन एट जोधपुरा, जिला जयपुर, (समरी पपर), रा हि का पाली सशन, 1973, प 16–18
साकलिया, एच डी	बिगिनिंग्स आफ सिविलाइजेशन इन राजस्थान इ डिया, खण्ड 9 (1972), अक 1, प 1–13
	वही, अक 2, प 69–82
	वही, खण्ड 10 (1972), अक 1, पृ 1–28
श्रीवास्तव, एस पी	गगानगर जिले की एक रोचक एव द्वितीय मध्यम कलाकृति— रिसचर खण्ड 8–9, (1966–68) प 85–86
हैण्डले, टी एस	बुद्धिस्ट रिमन्स नियर सांभर, ज रा ए सा ग्रे खण्ड 10 (1965), पृ 29

ग सहायक ग्रन्थ

अग्रवाल, डी पी एव पाण्डे बी एम (सपा)	इकालोजी एण्ड आर्कियोलोजी आफ वेस्टन इ डिया, दिल्ली 1977

अग्रवाल, डी पी — सी–14 डटस, बनास कल्चर एण्ड दी आयरस, करेंट साइंस, खण्ड 35, अंक 5 (1966)

कृष्णन, एम एस — इवोल्यूशन आफ दी डजट इन प्रो सिम्पा राज डजट बु ने सा ई जिल्द 1, 1952, पृ 19

घोष, ए एन पाणिग्रही के सी — पाटरी आॅफ अहिच्छात्रा ए, ई, अंक 1 (1946), पृ 37–59

जोशी, जगत पति — एक्सप्लोरेशन इन कच्छ एण्ड एक्सकवेशन एट सुरकोटडा एण्ड न्यू लाइट आन हरप्पन माइग्रेशन ज ओ ई, जिल्द 22 अंक 1 2, पृ 98–144

दीक्षित, के एन — राजस्थान अर्ली कल्चर्स रिसर्च खण्ड 2, पृ 35–38

निगम, जे एस — मादन ब्लक पालिश्ड वयर माग जिल्द 14 अंक 3 (जून 1961) पृ 36

परमार, बी एम एस — नोह एक्सकवेशन स्ट्रटीफिकेशन एण्ड क्रोनोलाजी (ड्रॅफ ए बी सी डी इ), रा हि का षड सथान, उदयपुर (1969), पृ 21–24

परमार, बी एम एस — राजस्थान के युगयुगीन सिक्के रिसर्च, खण्ड 12–13 (1972–73) पृ 1–18

बनर्जी आद्रिस — सीक्वेन्स आॅफ कल्चर्स इन राजस्थान, मन इन इंडिया, खण्ड 43, पृ 225–32

मिश्रा, वी एन — नागौर ए लेट पोलिपालितिक सप्लमेण्ट इन नार्थ वस्ट इंडिया, वल्ड आर्कियालोजी, जिल्द 5, पृ 92–111

मोहापात्रा, जी सी एव अन्य — दि डिस्कवरी आफ ए स्टोन एज साइट इन दि इ डियन डेजट, रिसच बुलटिन आफ दि पजाब यूनिवर्सिटी, जिल्द 14, खण्ड 3–4, (दिसम्बर 1963), प 215–223

लाल, बी बी — एक्सकैवेशन एट हस्तिनापुर, ए इ, अक 10–11 (1954–55), प, 5–151

लाल, बी बी एव थापर, बी के — एक्सकैवेशन एट कालीबगा, कल्चरल फारम (जुलाई 1967), प 80

विजयकुमार — एक्सकवेशन एट जाधपुरा, जिला जयपुर, (समरी पेपर), रा हि का पाली सेशन, 1973, प 16–18

साकलिया, एच डी — बिगिनिंग्स आफ सिविलाइजेशन इन राजस्थान, इ डिया, खण्ड 9 (1972), अक 1, प 1–13

वही, अक 2, प 69–82

वही, खण्ड 10 (1972), अक 1, प 1–28

श्रीवास्तव, एस पी — गगानगर जिले की एक रोचक एव द्विलिंग मण्मय कलाकृति— रिसचर खण्ड 8–9, (1966–68) प 85–86

हैण्डले, टी एस — बुद्धिस्ट रिमन्स नियर साँभर, ज रा ए, सो ग्र खण्ड 16 (1965), पृ 29

ग सहायक ग्रन्थ

अग्रवाल, डी पी एव पाण्डे वी एम (सपा) — इकोलोजी एण्ड आर्कियोलोजी आफ वेस्टन इ डिया, दिल्ली 1977

अग्रवाल, वी एस	इ डियन आट, खण्ड 2, गुप्त आट, पृथ्वी प्रकाशन, लका, वाराणसी
अल्तेकर, अ स	दवाकाटक गुप्त एज , 1954
उपाध्याय, वासुदेव	भारतीय सिक्के
कौशल्यान, भदन्त आनन्द	*जातक कथा, प्रथम खण्ड, हिन्दी साहित्य* सम्मेलन, प्रयाग 1942
जोशी, नीलकण्ठ पुरुषोत्तम	मथुरा की मूर्तिकला, *1965*
दासगुप्त, कल्याणकुमार	ऐ ट्राइबल हिस्ट्री आफ इ डिया, नवभारत प्रकाशन, कलकत्ता, 1974
देव, शा भा (सपा)	आर्कियोलोजिकल कांग्रेस एण्ड सेमिनार पेपर्स, नागपुर, 1972
राय चौधरी, एस सी	पोलिटिकल हिस्ट्री आफ एशियन्ट इ डिया, सप्तम सस्करण, कलकत्ता यूनिवर्सिटी, *1972*
शर्मा, दशरथ (सपा)	राजस्थान थ्रू दि एजेज, स्टेट आर्काइ स बीकानेर 1966,
साँकलिया, एच डी	प्रीहिस्ट्री एण्ड प्रोटो हिस्ट्री आफ इ डिया एण्ड पाकिस्तान, द्वितीय सस्करण, डेक्कन कालेज पूणे, 1974
सिन्हा, बी पी (सपा)	पाटरीज इन ऐशियन्ट इ डिया, पटना,

घ पत्रिकायें

इडियन आर्कियोलोजी, ए रिव्यू, नई-दिल्ली

इडियन एण्टीक्वरी, बम्बई

इडियन हिस्टोरिकल क्वॉटरली, कलकत्ता

एडमिनिस्ट्रेटिव रिपोट, आर्कियोलोजिकल डिपाटमेंट, जोधपुर

ऐंशियन्ट इडिया, दिल्ली

जनरल ऑफ न्यूमिसमेटिक सोसाइटी आफ इडिया, वाराणसी

जनरल ऑफ दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बगाल, कलकत्ता

जनरल ऑफ बिहार रिसच सोसाइटी, पटना

प्रोग्रेस रिपोट आर्कियोलोजिकल सर्वे ऑफ इडिया (वेस्टन सर्किल)

प्रोसीडिंग्स ऑफ इडियन हिस्ट्री कांग्रेस

पुरातत्व, बुलेटिन ऑफ दी इडियन आर्कियोलोजिकल सोसायटी, वाराणसी, नई दिल्ली

मरुभारती, पिलानी, राजस्थान

मैन एण्ड इनविरामेंट, इडियन सोसायटी आफ प्रोहिस्ट्री एण्ड क्वाटरली स्टडीज, अहमदाबाद

रिसचर, बुलेटिन ऑफ दी राजस्थान आर्कियोलोजी एण्ड म्युजियम, जयपुर, राजस्थान

ललित कला

शोध पत्रिका
